UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178797

UNIVERSAL
LIBRARY

—880—5-8-74—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

No. H83 T83V Accession No. PG.H4956

hor वार्ष्णेय, कुसुम

le निराला का कथा साहित्य · 1971.

is book should be returned on or before the date last marked below

निराला का कथा-साहित्य

लेखिका

डॉ० कुसुम वार्ष्णेय

वितरक

साहित्य भवन (प्रा) लिमिटेड

इलाहाबाद - 3

© लेखिका

प्रथम संस्करण	१९६३
संशोधित संस्करण	१९७१
प्रकाशक	ममता प्रकाशन, इलाहाबाद
मुद्रक	माया प्रेस प्राइवेट, लिमिटेड, इलाहाबाद
मूल्य	चार रुपया

पुनश्च

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के साहित्य का मूल्यांकन आज ठीक-ठीक हो पा रहा है, यह प्रसन्नता का विषय है। 'प्रसाद' और प्रेमचन्द की भांति 'निराला' का भी अब अनेक विश्वविद्यालयों में विशेष प्रश्न-पत्र के रूप में अध्ययन हो रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम 'निराला' के कथाकार वाले रूप को पहचाने और उसका सही मूल्यांकन करें। मेरी पुस्तक 'निराला' का कथा-साहित्य इसमें योग-दान दे रही है यह मेरे लिए अपार संतोष की बात है।

कुसुम वार्ष्णेय

ग्रंथ के संबंध में

डा० कुसुम वार्ष्णेय कृत 'निराला' का कथा साहित्य' पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। 'निराला' जी के कथा-साहित्य का यह सर्व प्रथम अनुशीलन-ग्रथ डा० वार्ष्णेय के गम्भीर अध्ययन और विवेचन का फल है। पुस्तक की इतनी सहज एवं मनोमोहक शैली है कि पाठक आदि से अंत तक बिना पूरी पुस्तक पढ़े रह नही सकता। 'निराला' के उपन्यासो, रेखाचित्रों और कहानियों के कथानकों और पात्रों का इतना सफल, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते हुये भी डा० कुसुम वार्ष्णेय ने सामाजिक और राजनीतिक परिवेश का सर्वत्र पूरा ध्यान रखा है। 'निराला' की कला, 'निराला' की रचना शैली, 'निराला' की भाषा और सर्वोपरि 'निराला' की व्यापक दृष्टि एव सहज सहानुभूति की परख डा० कुसुम वार्ष्णेय में पर्याप्त मात्रा मे है। 'निराला' जैसी महान् प्रतिभा के प्रति पूर्ण आदर भाव रखते हुये भी, डा० कुसुम वार्ष्णेय उनके व्यक्तित्व से आतकित न हुईं, वरन् अत्यन्त स्पष्टता के साथ उनकी रचनाओं की कमज़ोर कड़ियों की कड़ी आलोचना की है। जहाँ एक ओर उन्होने रचनाकार के अनेक गुणो की भूरि-भूरि प्रशसा की है, वही उन्होने अनेक स्थलों पर उनकी त्रुटियो और कमज़ोरियो के प्रति अपना क्षोभ भी प्रकट किया है। आलोचक का यही धर्म है और हमें प्रसन्नता है कि अपने इस सहज धर्म का पालन करने मे डा० कुसुम वार्ष्णेय ने सर्वत्र विवेक और संतुलन का परिचय दिया। इसके फलस्वरूप यह अनुशीलन-ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी बन गया है। इसके पाठको को 'निराला' जी के कथा-साहित्य का मूल्यांकन करने में, रस लेने मे, प्रेरणा ग्रहण करने में सुविधा होगी—इसमें कोई संदेह नही।

'निराला' जी को युग-पुरुष और महाकवि के रूप में सारा हिन्दी संसार याद करता है। मगर वह कितने सफल गद्य लेखक थे, कितने

कुशल कथाकार थे यह तो इस ग्रंथ के अध्ययन से ही स्पष्ट होगा। भाषा पर 'निराला' का अद्‌भुत् अधिकार तो था ही, अपने पात्रों से उनका कितना गहरा संबन्ध था, कितना घनिष्ट परिचय था, उनके प्रति उनके मन में कितनी गहरी सहानुभूति थी! 'निराला' कृषक-जीवन से अन्तरंग रूप से परिचित थे, उसके सौदर्य और सौष्ठव पर ही नही, उसकी विकृतियो एवं कुघड़ताओं पर भी उनकी गहरी दृष्टि जमी हुई थी। इसीलिये वह प्रेमचद से अधिक व्यावहारिक और यथार्थवादी हो सके। उनके मन मे भारतीय कृषक समाज के भविष्य के संबंध में कोई भ्रम न था, मगर वे उस कठोर सघर्ष की भी उपेक्षा नही कर सकते थे जो अनिवार्य रूप से कृषक जीवन में आता ही। यह सही है कि 'निराला' जी ने अपनी कहानियों एवं उपन्यासों में नागरिक पात्रों का अत्यन्त सफल चित्रण किया है, मगर यह भी सत्य ही है कि उनके ग्रामीण पात्रों का चित्रण अद्‌भुत् और अछूता है।

'निराला' जी हास्य एव व्यंग्य के आचार्य थे। मगर उनके हास्य-व्यंग्य के फुहारों से उनकी मार्मिकता और गम्भीरता का रग फीका न हुआ वरन् और भी अधिक चोखा हो गया। कथाकार 'निराला' परिमाण अथवा संख्या की दृष्टि से अधिक कथा-साहित्य प्रस्तुत न कर सके। मगर वह जो कुछ दे गये है वह उनकी प्रतिभा और रचना कौशल का प्रमाण है!

डा० कुसुम वार्ष्णेय ने 'निराला का कथा-साहित्य' प्रस्तुत करके आलोचको और शोधकर्ताओ के लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया है और 'निराला के कथा-साहित्य' के अनुशीलन के लिये एक मान-दण्ड भी स्थापित कर दिया है।

'निराला का कथा-साहित्य' विज्ञ पाठकों को उपयोगी और रोचक लगेगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

—श्रीकृष्ण दास

दो शब्द

'निराला' का व्यक्तित्व बहुमुखी था। एक महान् कवि और छायावाद के समर्थ विश्लेषक होने के अतिरिक्त वे एक कथाकार भी थे। पर इन सब से भी अधिक महत्त्वपूर्ण उनका सत्य मानवीय व्यक्तित्व था। वे सही अर्थो मे मानव थे और मानवता के जबर्दस्त पोषक थे। उनके व्यक्तित्व की यही विशेषता उनके साहित्य को भी जीवन पर्यन्त अनुप्राणित करती रही। आन्तरिक अनुभूतियो एवं मानवीय सवेदनाओ की सशक्त भावनाओ से प्रेरित साहित्य ही श्रेष्ठ पद का अधिकारी होता है, यही कला-निर्माण की अन्यतम प्रक्रिया हे। इस दृष्टि से 'निराला' जी की चाहे कविताएँ ली जॉय, या काव्य-सग्रहो की भूमिकाएँ या कहानियाँ, उनमे गहराई तक पैठने की ऐसी क्षमता प्राप्त होती है जो 'निराला' को अत्यन्त महान् बना देती है।

यद्यपि 'निराला' प्रमुख रूप से एक विद्रोही कवि के रूप मे ही अधिक माने जाते है, पर उनके उपन्यास एव कहानियाँ किसी भी दृष्टि से उपेक्षणीय नही है। कवि रूप की प्रधानता का कारण यह भी हो सकता है कि उनकी कहानियाँ एव उपन्यास सख्या मे बहुत कम प्राप्त होते है। दूसरे उन्होने काव्य-शिल्प के क्षेत्र मे जितने विविध प्रयोग किए एव रूपान्वेषण के प्रति जितनी अधिक रुचि प्रदर्शित की, उतनी उपन्यास-कहानियो मे नही। उन्होने न तो अपने कथा-साहित्य मे कोई नवीन प्रयोग ही किया न शिल्प को मॉजने अथवा उत्कृष्ट रूप प्रदान करने के लिए विशेष प्रयत्न ही किया। कहने का अभिप्राय यह नही है कि उनका कथा-साहित्य उच्च स्तर का नही है, अथवा उसमे कला-प्रौढ़ता एव नवीन शिल्पान्वेषण की भावना नही है। सत्य तो यह है कि यदि उपन्यास-कहानियों की परिभाषा शास्त्रीय ढंग से न देकर स्वाभाविक ढग से दे, तो उनका कथा-साहित्य उतना ही श्रेष्ठ ठहरता है, जितना किसी भी अन्य

श्रेष्ठ कथाकार का साहित्य। अपने कथा-साहित्य की रचना प्रक्रिया में उन्होने कभी कला मात्र को ही अपना अन्तिम उद्देश्य नहीं स्वीकार किया। कला उनके लिए साधन थी, उनका लक्ष्य नही। उनके उपन्यासो को ही लीजिए। चाहे वह 'चोटी की पकड़' हो या 'अप्सरा', 'अलका' हो या 'निरुपमा', सभी मे 'कथा' की प्रधानता मिलती है, कला की नहीं, और यही कारण है कि उनके सभी उपन्यासों में कथानक का स्वाभाविक एवं सहज-गति से विकास होता है। उनके पात्र हमारे आपके बीच के हैं, और उनका चारित्रिक विकास भी सहज गति से ही हुआ है। वे सभी पात्र वर्गगत है, और उनकी परिकल्पना भी एक विशेष भाव से की गई है।

इसी सन्दर्भ में 'निराला' की दो एक अन्य बातों का उल्लेख यहाँ कर देना असगत न होगा। 'निराला' ने अपना कथा-साहित्य उस काल मे रचा था, जब प्रेमचन्द अपने विकास के चरमोत्कर्ष पर थे, और उनका आदर्शवादी दृष्टिकोण उनके समकालीन सभी उपन्यासकारों को अनुप्राणित कर रहा था। 'निराला' इसके अपवाद नही थे। उनके सभी उपन्यास आदर्शवादी दृष्टिकोण की व्यापकता पर ही आधारित है। यह बात उनके व्यक्तित्व से बहुत मेल खाती है। पर अपनी इस आदर्शवादी भावना के कारण उनके उपन्यासो एवं कहानियो मे प्रायः ऐसी दिशाएँ प्राप्त होती है, जो पूर्णतया अस्वाभाविक-सी प्रतीत होती है। वे पात्रो के चरित्रो को भी अपनी आदर्शवादी भावना के प्रस्फुटन के लिए जान-बूझ कर ऐसा मोड़ देने से नही हिचकते, जो उन पात्रो की मुख्य प्रवृत्तियो एवं कथानक के प्रवाह की दृष्टि से पूर्णतया असगत प्रतीत होते है। ऐसा कुछ तो युगीन प्रभाव के कारण और कुछ उनके विद्रोही स्वभाव के कारण हुआ है। वस्तुतः वे तत्कालीन समाज मे तेज़ी से फैलती जा रही पाश्चात्य सभ्यता, एवं फ़ैशनपरस्ती एवं नारियो द्वारा अपनी परम्परागत गौरवपूर्ण मर्यादाओं को भूलते जाने एव उच्छृखलता के आत्मसात् करने के कारण बहुत ही खिन्न थे, और उनकी देश भक्ति की प्रबल भावना ने ही उन्हें ऐसा करने के लिए विवश किया था। 'अप्सरा' (१९३१) में पार्क में कनक की

एक अँग्रेज़ की कुभावना एवं दुर्व्यवहार से जिस प्रकार रक्षा हुई है, वह बहुत कुछ अस्वाभाविक होते हुए भी 'निराला' की इसी भावना का परिचायक है। 'अलका' (१९३३) में नारी के आदर्शों, उसकी गौरवपूर्ण मर्यादाओ को ही अत्यधिक महत्व दिया गया है, और अलका को एक के बाद एक परिस्थितियो मे रखते हुए जिस प्रकार उसका चारित्रिक विकास दिखाया गया है, और अन्तिम उद्देश्य की पूर्ति की गई है, उसे यथार्थवादी प्रवृत्तियो के पोषक कदाचित् तिरस्कृत कर दें; पर इतना अवश्य ही सत्य है कि 'निराला' आदर्शवादी होते हुए भी एक प्रगतिशील कलाकार थे। वे अपने जीवन की प्रक्रियाओ और साहित्य मे पूर्णतया यथार्थवादी थे। उन्होने कभी यथार्थता से अपनी आँखे बन्द नही की। यह अवश्य सत्य है कि कही-कहीं आदर्शवाद के प्रति उनका आग्रह बढ़ गया है।

वे रूढ़ियो एव अध-विश्वासो के कभी समर्थक नही रहे। उनके उपन्यासो एव कहानियो मे इसका पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। उनकी 'लिली', 'ज्योतिर्मयी' आदि कहानियाँ एव 'चोटी की पकड़', 'निरुपमा' आदि उपन्यास इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है। 'निरुपमा' (१९३६) मे नारीगत रूढ़ियाँ, परम्पराओ के प्रति मोह एवं आधुनिकता के प्रति दुराग्रह, त्याग एव सहिष्णुताका जान-बूझ कर वर्णन किया गया है। वस्तुतः उनकी व्यग्य की भावना बड़ी प्रबल थी और तीखे व्यंग्य कसने मे वे अत्यन्त श्रेष्ठ थे। उनके कुछ उपन्यासो मे हास्य एव व्यग्य के जो सजीव चित्र प्राप्त होते है, वे आज तक हिन्दी साहित्य मे दुर्लभ है। आज भी 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' हिन्दी मे अपने ढग के अकेले एव अनूठे हास्य रस एव व्यग्य के उपन्यास है। यहाँ यह भी कह देना असंगत न होगा कि आज की कहानियो एव उपन्यासों को पूरा पढ़ डालने के लिए जिस परिश्रम एवं द्रविड़-प्राणायाम करने की आवश्यकता है, और उनके समाप्त करने पर जिस शून्य की स्थिति प्राप्त होती है, उनकी तुलना मे 'निराला' का कथा-साहित्य कही श्रेष्ठ और मार्मिक है। वे अन्यतम कथाकार थे।

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि ऐसे ही महान् कथाकार के कथा-साहित्य की समीक्षा हिन्दी में पहली बार प्रस्तुत की जा रही है, और वह भी मेरी छात्रा, डॉ०कुसुम वार्ष्णेय के हाथों संभव हो रहा है। आज इस बात की अत्यधिक आवश्यकता है कि हम उनके काव्य-साहित्य की ही नही, कथा-साहित्य की भी नए सिरे से सम्यक् समीक्षा एवं अध्ययन करें, तथा कथा-साहित्य मे 'निराला' का वास्तविक स्थान निर्धारित करे। प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रयास का प्रारम्भ ही माना जाना चाहिए, अन्त नही। मुझे विश्वास है कि डॉ० वार्ष्णेय की यह पुस्तक हिन्दी के एक बहुत बड़े अभाव की पूर्ति करेगी और उसका हिन्दी-जगत् में समुचित स्वागत होगा।

हिन्दी विभाग
इलाहाबाद यूनिवर्सिटी
१३.५.१९६३

लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

लेखिका की ओर से

सामान्य पाठक 'निराला' के मात्र कवि रूप से परिचित है और इस रूप के सामने जैसे कथाकार 'निराला' खो गया है। प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से मैंने कथाकार 'निराला' को ढूंढ निकाला है और उन्हें पाठकों के सामने ला खड़ा किया है। 'निराला' के कथा-साहित्य के अध्ययन से मैं इस निष्कर्ष पर पहुंची हूं कि सफल कवि होने के साथ-साथ 'निराला' एक अच्छे कथाकार भी थे, भले ही इस रूप में वे उतने लोकप्रिय न हो पाये हों। 'निराला' मे कथाकार बनने की प्रवृत्ति थी भी नही, उसका प्रयास भी उन्होने नही किया। वे मस्त तबीयत के आदमी थे। कुछ कहने की तबीयत आ गयी, तो कह दिया—सरल, निरलंकृत और भाव-पूर्ण शैली मे। अतएव, 'निराला' के कथा-साहित्य में शिल्पगत वैशिष्ट्य खोजने की चेष्टा करना अनुचित है, क्योंकि उसमें शिल्पगत सौदर्य है—प्राकृतिक और अनायास आया हुआ। फलतः वह कृत्रिमता के बोझ से परे हैं। इसीलिए उनके कथा-साहित्य मे आत्मचरित सबधी अंशों का प्रवेश भी अनायास हो गया है। कहानी कहते-कहते जहाँ कहीं भी उन्हें अपने जीवन के भूले-भटके संस्मरण याद आये, उन्हें उन्होंने वही जड़ दिया। उनके वे संस्मरण सोने में मोती की भांति जगमगा उठे हैं।

इन संस्मरणों में कहानी से अधिक रोचकता और विस्मय है। 'कुल्लीभाट' में लेखक की जीवनगत सामग्री ने हास्य-व्यंग्य और अभिव्यक्ति में अपूर्वता ला दी है। 'चतुरी चमार' और 'देवी' की करुणा में भाव-प्रवणता इसीलिए है कि उनमें कहानी को लेखक की अनुभूति का सहारा मिला है। 'सुकुल' की बीबी' कहानी की तमाम रोचकता 'निराला' के हास्यपूर्ण संस्मरणो में केन्द्रित है।

'निराला' के कथा-साहित्य के अध्ययन के अनन्तर एक बात की ओर मेरा ध्यान विशेष रूप से गया—वह यह कि 'निराला' सफल गद्य-शैली

कार थे। उनकी अभिव्यक्ति में निरालापन है। भावो के अनुरूप कहीं शैली में चुलबुलाहट है, तो कहीं हास्य और व्यंग्य की बौछार है। ऊपर से मधुर दीखने वाले हास्य में तिलमिला देने वाला व्यंग्य निहित है। समास, शैली और नये उपमानों की संयोजना ने भावाभिव्यक्ति मे गहनता एवं तीव्रता ला दी हैं। 'कुल्लीभाट' में 'कुल्ली पस्त, जैसे लत्ता हो गये' कह देने से कुल्ली की उस समय की स्थिति और अनुभावों की अभिव्यक्ति कितनी कम शब्दावली में हो उठी है, यह कहने की आवश्वकता नहीं है। 'निराला' के कहने की शैली में एक ऐसी शक्ति है, जो दिल और दिमाग़ पर चोट करती है। बात साधारण होती है, पर उसके कहने के ढंग के कारण उसमें कैसा व्यंग्य व्याप्त हो जाता है, यह 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी' कहानी के एक उद्धरण से स्पष्ट है: "श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी श्रीमान् पं० गजानन्द शास्त्री की धर्मपत्नी हैं। श्रीमान् शास्त्री जी ने आपके साथ यह चौथी शादी की है, धर्म की रक्षा के लिए। शास्त्रिणी जी के पिता को षोडशी कन्या के लिए पैंतालीस साल का बर बुरा नही लगा, धर्म की रक्षा के लिए। वेद्य का पेशा अख्तियार किये शास्त्री जी ने युवती पत्नी के आने के साथ 'शास्त्रिणी' का साइन-बोर्ड टाँगा, धर्म की रक्षा के लिए। शास्त्रिणी जी उतनी ही उम्र में गहन पातिव्रत्य पर अविराम लेखनी चालना कर चली, धर्म की रक्षा के लिए। मुझे यह कहानी लिखनी पड़ रही है, धर्म की रक्षा के लिए।"

प्रस्तुत पुस्तक में 'निराला' के कथा-साहित्य की निष्पक्ष समीक्षा की गयी है। उनके कथा-साहित्य में मुझे अनेक कमियाँ और त्रुटियाँ भी मिलीं, जिनका उल्लेख मैंने स्पष्ट शब्दों में किया है। विषय-प्रवर्तन में सरलता और सुबोधता का ध्यान रखा गया है, जिससे साधारण पाठक और समालोचक दोनों लाभान्वित हो सकें।

संपूर्ण पुस्तक को निम्नांकित ६ अध्यायों में विभक्त किया गया है यथा—'पूर्व पीठिका', 'निराला' के रोमान्टिक उपन्यास, 'निराला' के यथार्थवादी उपन्यास, 'निराला' की कहानियाँ, 'निराला' के कथा-साहित्य में नारी, हिन्दी कथा-साहित्य में 'निराला' का स्थान।

मैं आदरणीय डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय को श्रद्धा समर्पित किये बिना नहीं रह सकती, जिन्होंने व्यस्त रहते हुए भी पुस्तक के सम्बन्ध में केवल सुझाव ही नहीं दिये, इसके लिए 'दो शब्द' भी लिखना स्वीकार किया। श्रद्धेय श्रीकृष्ण दास जी की मैं अत्यंत आभारी हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा दी।

१४. १०. ६३. —कुसुम वार्ष्णेय

विषय सूची

	पृष्ठ संख्या
अध्याय १ पूर्व पीठिका	१
अध्याय २ 'निराला' के रोमान्टिक उपन्यास	१६
अध्याय ३ 'निराला' के यथार्थवादी उपन्यास	४०
अध्याय ४ 'निराला' की कहानियाँ	६१
अध्याय ५ 'निराला' के कथा-साहित्य में नारी	६६
अध्याय ६ हिन्दी कथा-साहित्य में 'निराला' का स्थान	१०८

'निराला' का कथा-साहित्य

अध्याय १

पूर्व पीठिका

व्यक्तित्व

'निराला' के सम्पूर्ण कृतित्व में एक विद्रोही, क्रांतिकारी और युग-प्रवर्तक लेखक मुखरित हुआ है। उनके साहित्य में हमे एक ऐसी मानवता के दर्शन होते है, जो काल-विशेष, राष्ट्र-विशेष और जाति-विशेष की सीमाओं मे नही बाँधी जा सकती। 'निराला' को हम मानवता का प्रतिनिधि कह सकते है। वे सत्यं, शिव, सुन्दरं के उपासक थे। उत्कट आत्म-विश्वास, चारित्रिक दृढ़ता एवं दार्शनिक मनोवृत्ति ने उनके व्यक्तित्व को एक प्रकार की दिव्यता और प्रखरता प्रदान की थी। उनके स्वभाव की परस्पर-विरोधी वृत्तियों ने उनको सर्वथा एक भिन्न और विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान किया था। एक ओर जहाँ वे किसी पर उत्कट क्रोध और व्यंग्य कर सकते थे, तो दूसरी ओर उसी पर अपरिमित प्यार, सौहार्द, स्नेह और श्रद्धा भी रखते थे। महात्मा गाँधी, पं० जवाहर लाल नेहरू और सुमित्रानन्दन पंत से उनका कई बार विरोध हुआ किन्तु विरोध विरोध की जगह रहा और श्रद्धा तथा स्नेह अपनी जगह। वस्तुतः निराडम्बर प्रकृति और खुला व्यवहार 'निराला' के स्वभाव की विशेषता थी। सबल के सम्मुख वे सदैव हठी बने रहे किन्तु निर्बल के सामने उन्होंने अपना सर्वस्व समर्पित किया। उनका अटूट और दृढ़ आत्म-सम्मान कभी भी विच्छिन्न नही होने पाया, क्योंकि किसी के सामने वे कभी पराजित और विचलित नहीं हुए। उनके जीवन में संघर्ष के ऐसे अनेक क्षण आये कि साधारण व्यक्ति टूट जाता, बिखर जाता, इससे भी अधिक झुक जाता, किन्तु 'निराला' ही थे कि किसी भी परिस्थिति में उनका संकल्प और आत्म-बल

कमज़ोर नहीं पड़ने पाया। वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना नहीं जानते थे। परिस्थितियों से टकरा जाते थे, किन्तु टूटते नहीं थे। फलतः वे सदैव अजेय और अविचलित रहे, भले ही इस कारण लोगों ने उन्हें अहंकारी और उच्छृंखल कहा।

'निराला' बड़ी ही उन्मुक्त प्रकृति के मनुष्य थे। किसी प्रकार का नियन्त्रण और अनुशासन उन्हें मान्य न था। अपने व्यक्तिगत जीवन और साहित्यिक जीवन दोनों में उन्होने स्वच्छंद मान्यताएँ अपनायीं। 'निराला' के उन्मुक्त स्वभाव का आभास हमें उनकी कविता मे प्रयुक्त मुक्तक छंदों और कथा-साहित्य के स्वच्छंद पात्रों से मिलता है। उनके लगभग समस्त पात्रों का व्यक्तित्व स्वतंत्र मान्यताओं से ओतप्रोत है। वस्तुतः 'निराला' के कथा-साहित्य की पृष्ठभूमि समझने के लिए हमें उनके जीवन, स्वभाव, परिस्थितियों तथा तद्युगीन वातावरण का अध्ययन करना आवश्यक है।

'निराला' का जन्म सन् १८९६ ई० में बंगाल के मेदिनीपुर ज़िले की महिषादल नामक ज़मीदारी मे हुआ। यह स्थान प्राकृतिक सौंदर्य-सुषमा से परिपूर्ण है। 'महाकवि निराला अभिनन्दन ग्रंथ' के संपादकीय में 'निराला' के जन्म-स्थान का वर्णन इस प्रकार मिलता है: "चावलों के खेत, पाट के खेत, दूर तक पंक्तिबद्ध और दायरेबद्ध ताड़वृक्ष व नारियल के गगनचुंबी कम्पित रेखाकार स्तंभ। सघन कुज और उनके बीच सरल ग्रामीणों के बंगाली झोपड़े। हर वस्तु कला से वेष्टित, हर पृष्ठभूमि सलज्ज हरियाली के आँचल से जीवन्त। प्रकृति का स्नेह दूर दिशा तक इस तरह हिलोरें लेता हुआ कि कही सूखी ज़मीन दिखाई न दे। ग्रीष्म भी जिसके सिर पर हावी होकर स्निग्ध हो चुकी थी। शस्य श्यामला शब्द जहाँ खिले गुलाब सा पुष्पित हो रहा हो। ग्रामीण बधुओं की कार्य-तत्परता खेतों में मानवी श्रम को दिग्गंत बना रही थी। कि बहुना विश्व-कवि टैगोर की आत्मा जहाँ स्थित भाव से परिशांत विचरण कर रही थी।" ऐसे स्थान और वातावरण में जन्म लेने वाले 'निराला' के कथा-साहित्य में यदि प्राकृतिक सुषमा के मनोरम और सजीव चित्र मिलते हैं, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

तीन वर्ष की अवस्था में 'निराला' की मा का देहावसान हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि इस अबोध अवस्था में मा की ममता और प्यार से वंचित होने के कारण ही कदाचित् 'निराला' बचपन से ही आत्मलीन बन गये थे। दूसरी ओर एक मात्र संतान होने के कारण पिता के अपरिमित दुलार और साथ ही कठोर अनुशासन ने उन्हें ज़िद्दी और उद्दण्ड बना दिया था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा बंगाली स्कूल में हुई। बंगला राजपरिवार के सम्पर्क में रह कर उन्हें बंगला से स्वाभाविक रुचि और लगाव हो गया। अपने निबंध संग्रह 'प्रबंध-प्रतिभा' में उन्होंने कहा है कि "बंगला मेरी वैसी ही मातृ-भाषा है, जैसी हिन्दी।" बाद में ऊँची कक्षा में आने पर हिन्दी, संस्कृत और अँगरेज़ी भाषाएं भी सीखीं। पर 'निराला' बड़े ही मनमौजी स्वभाव के थे, फलतः जो विषय उन्हें रुचिकर लगता उसे तो वे खूब पढ़ते और जो नीरस लगता उसे छूते तक न थे। वे बचपन से ही महत्त्वाकांक्षी थे और जब उन्होने सुना कि विश्वकवि रवीन्द्रनाथ केवल नवीं कक्षा तक पढ़े थे, तब उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि वे इससे ज्यादा नहीं पढ़ेंगे, क्योंकि उन्हें भी बहुत बड़ा लेखक बनना है। किन्तु परीक्षाएं न देने से उनका अध्ययन रुक नहीं गया, प्रत्युत अध्ययन में उनकी रुचि बढ़ती गयी और कम अवस्था में ही उन्होंने रामायण, गीता तथा उपनिषद् का तत्व समझ लिया।

'निराला' को जीवन पर्यन्त कटु एवं तिक्त अनुभव होते रहे, जिसके फलस्वरूप वे विद्रोही बन गये थे। ब्राह्मणों में वे निम्नतम कुल के कनौजिया ब्राह्मण थे। इसके लिए उन्हें अनेक बार अपमानित होना पड़ा था, जिसका उन्होंने बराबर प्रतिशोध लिया। अपनी पुत्री सरोज के विवाह में वे स्वयं पुरोहित बने। उनकी यह प्रतिकार भावना निम्नवर्ग के व्यक्तियों के प्रति हार्दिक संवेदना और सहानुभूति के रूप में भी प्रकट हुई है। 'हिरनी', 'चतुरी चमार', 'देवी' तथा 'राजा साहब को ठेंगा दिखाया', कहानियाँ तथा 'कुल्लीभाट' एवं 'बिल्लेसुर बकरिहा,' उपन्यास उनके इसी सौहार्द और संवेदनशीलता के परिणाम हैं। अतएव, स्पष्ट है कि अपने समकालीन लेखकों की अपेक्षा निराला का दृष्टिकोण अधिक प्रगतिशील रहा, क्योंकि उनमें वास्तविकता का बोध सबसे अधिक था और यह बोध इसलिए

अधिक था कि जीवन्त यथार्थ से उनका संबंध सबसे अधिक रहा। 'निराला सामाजिक जीवन में सबसे अधिक जागरूक और सक्रिय रहे। इस प्रगतिशीलता का ही परिणाम है कि वे पलायनवादी और आदर्शवादी भ्रमों से निर्लिप्त रह सके।

'निराला' के व्यक्तित्व तथा कथा साहित्य की पृष्ठभूमि समझने में उन से सम्बन्धित घटनाएं बड़ी सहायक है। अपनी अनेक कहानियों तथा व्यंग्य-चित्रों मे 'निराला' ने अपने जीवन पर प्रकाश डाला है। अपने रूढ़ि विरोधी स्वभाव तथा स्वच्छद प्रकृति का उल्लेख उन्होने स्वय 'कुल्लीभाट' में किया है : "मैं बचपन से आजादी पसंद था। दबाव नही सह सकता था, खासतौर से वह दबाव जिसकी वजह न मिलती हो।" इसीलिए जनेऊ हो जाने के बाद, पिता की सख्त मनाही के बावजूद वे समाज में नीचे समझे जाने वाले व्यक्तियों के साथ खाते-पीते रहे। पिता की अमानुषिक मार उन पर पड़ती थी, पर वे अपना हठ नही छोड़ते थे।

साहित्य-समाज मे प्रतिष्ठित हो जाने के बाद भी उनकी क्या स्थिति रही, 'देवी' नामक कहानी मे उन्होने इसका उल्लेख किया है : "बारह साल तक मकड़े की तरह शब्दों का जाल बुनता हुआ मै मक्खियाँ मारता रहा। मुझे यह ख्याल था कि मै साहित्य की रक्षा के लिए चक्रव्यूह तैयार कर रहा हूँ, इससे उसका निवेश भी सुन्दर होगा। और उसकी शक्ति का संचालन भी ठीक ठीक। पर लोगों को अपने फँस जाने का डर होता था, इसलिए इसका फल उल्टा हुआ। जब मै उन्हे साहित्य के स्वर्ग ले चलने की बातें कहता था, तब वे अपने मरने की बात सोचते थे, यह भ्रम था। इसीलिए मेरी कद्र नही हुई। मुझे बराबर पेट के लाले रहे। पर फ़ाक़ेमस्ती मे भी मै परियो के ख्वाब देखता रहा—इस तरह अपनी तरफ़ से मैं जितना लोगो को ऊचा उठाने की कोशिश करता गया, लोग उतना मुझे उतारने पर तुले रहे और चूंकि मैं साहित्य को नरक से स्वर्ग बना रहा था, इसलिए मेरी दुनिया भी मुझसे दूर होती गई, अब मौत से जैसे दूसरी दुनिया में जाकर मैं उसे लाश की तरह देखता होऊँ। 'दूबर होत नही कबहूँ पकवान के विप्र, मसान के कूकर' की सार्थकता मैंने दूसरे मित्रों में देखी, जिनकी निगाह दूसरों की दुनिया की लाश पर थी। वे

पहले फटीचर थे, पर अब अमीर बन गए हैं, दोमंज़िला मकान खड़ा कर लिया है, मोटर पर सैर करते है। मुझे देखते हैं, जैसे मेरा उनका नौकर मालिक का रिश्ता हो। नक्की स्वरों में कहते है—'हाँ, अच्छा आदमी है; जरा सनकी है। फिर बड़े गहरे पैठकर मित्र के साथ हँसते है। वे इतनी दूर बढ़ गये है, मै जिस रास्ते पर था, उसी पर खड़ा हूँ।"

'निराला' ने साहित्य को अपने जीने का साधन कभी नही बनाया। किसी संपादक से उन्होंने कहा था : "साहित्य मेरे जीवन का उद्देश्य है, जीने का नही। यह सच है कि मै जीता भी अपने साहित्य से हूँ, किन्तु वह मेरे जीने का साधन मात्र नही! जो मैं नही लिखना चाहता था, वह चाहे भूखों मर जाऊँ, न लिखूंगा और जो लिखना चाहता हूँ, लाखों रुपए के बदले मे उसे न लिखने की बात न सोचूंगा।" अतएव, 'निराला' ने अपनी कला को नीचे गिराकर पैसा कमाने की बात कभी नही सोची। वस्तुतः हिन्दी साहित्य की सेवा के लिए 'निराला' ने अपने को मिटा दिया। उन्होने प्रारम्भिक रचना बगला मे की थी, और इतना निश्चित है कि यदि वे बगला मे ही लिखते रहते तो इस लेखक की प्रसिद्धि और यश अब की प्रसिद्धि और यश से शतगुना होता। किन्तु पत्नी की प्रेरणा से वे हिन्दी मे लिखने लगे। फिर उनका हिन्दी प्रेम इतना बढ़ गया कि इसके लिए एक बार वह महात्मा गाँधी तक से जूझ पड़े थे। कोई नौकरी तक यदि उनकी साहित्य साधना मे बाधक होती, तो वे उसे तत्काल छोड़ देते थे, बाद मे उसके कारण चाहे उन्हे कितने ही आर्थिक कष्ट उठाने पड़ते। आकाशवाणी, साहित्यकारो और सरकार किसी से भी उन्होंने किसी प्रकार की सहायता नही ली, न उनका आश्रय ग्रहण किया। रेडियो अधिकारी तो अनेक प्रयत्न और अनुरोध करके रह गये, किन्तु उन्होंने अपनी कविताओं का पाठ नही किया। जहाँ भी उन्हें यह आभास मिलता कि उनके कृतित्व को 'कर्मशियल' बनाया जा रहा है, वही वे विरोध करते। निराला' का अतुल आत्म-विश्वास और निश्चय सदैव अटल रहा।

राष्ट्रीय आंदोलनों के प्रति 'निराला' सदैव जागरूक और सक्रिय रहे। किन्तु समाज और राजनीति के ढोंगी और संकुचित मनोवृत्तियों के नेताओं का उन्होंने सदैव विरोध किया। 'देवी' में 'निराला' ने इन पर

कटु व्यंग्य किया है : "देश में शुल्क लेकर शिक्षा देने वाले बड़े-बड़े विश्व-विद्यालय हैं। पर इस बच्चे का क्या होगा ? इसके भी मा है। वह देश की सहानुभूति का कितना अंश पाती है—हमारी थाली की बची रोटियाँ, जो कल तक कुत्तों को दी जाती थीं। यही, यही हमारी सच्ची दशा का चित्र है। यह मा अपने बच्चे को लेकर राह पर बैठी हुई धर्म, विज्ञान, राजनीति, समाज जिस विषय को भी मनुष्य होकर मनुष्यों ने आज तक अपनाया है, उसी की भिन्न रुचि वाले पथिक को शिक्षा दे रही है—पर कुछ कहकर नहीं, कितने आदमी समझते हैं ? यही न समझना संसार है —बार-बार वह यही कहती हैं। उसकी आत्मा से यही ध्वनि निकलती है—संसार ने उसे जगह नही दी—उसे नही समझा; पर ससारियों की तरह वह भी है—उसके भी बच्चा है। एक रोज़ मैंने देखा, नेता का जुलूस उसी रास्ते से जा रहा था। हजारों आदमी इकट्ठे थे। जय-जयकार से आकाश गूंज रहा था। मैं उसी बरामदे पर खड़ा स्वागत देख रहा था, पगली भी उठकर खड़ी हो गई थी। बड़े आश्चर्य से लोगों को देख रही थी। रास्ते पर इतनी बड़ी भीड़ उसने नही देखी। मुँह फैलाकर, भौहें सिकोड़कर आँखो की पूरी ताकत से देख रही थी—समझना चाहती थी—वह क्या था। क्या समझी, आप समझते है ? भीड़ में उसका बच्चा कुचल गया और रो उठा। पगली बच्चे की गर्द झाड़ कर चुमकारने लगी और फिर कैसी ज्वालामुखी दृष्टि से जनता को देखा। मैं यही समझता हूँ। नेता दस हज़ार की थैली लेकर ग़रीबो के उपकार के लिए चले गये—ज़रूरी जरूरी कामों में खर्च करेगे।" पगली के माध्यम से 'निराला' ने नेताओं पर कितना तीखा व्यग्य किया है ? इसी कहानी मे आगे चल कर लेखक ने हिन्दुओ के कर्मकाण्ड और धार्मिक आडम्बरों पर भी प्रहार किया है। वस्तुतः 'निराला' ने समाज-सेवा और देश-सेवा की वास्तविक रूपरेखा प्रस्तुत की है। 'कुल्लीभाट' में उन्होंने कहा है : "संसार में साँस लेने का भी सुभीता नही, यहाँ बड़ी निष्ठुरता है, यहाँ निश्छल प्राणों पर ही लोग प्रहार करते हैं, केवल स्वार्थ है यहाँ, वह चाहे जन-सेवा हो, चाहे देश-सेवा, इस सेवा से लोग अपनी सेवा करना चाहते हैं; किसान इसलिए काँग्रेस में आते हैं कि जमींदार की मारों से, सरकार के अन्याय

से बचें और ज़मीन उनकी हो जाय; ग़रीब इसलिए तारीफ़ करते हैं कि उन्हें कुछ मिलता है। पर इतना ही क्या सब कुछ है ? क्या इनसे जीवन को शांति मिलती है ? शायद साँस के रहते नही मिलती।" इस प्रकार 'निराला' ने सभी वर्गों की स्वार्थी मनोवृत्ति का उद्घाटन किया है। वास्तव में 'निराला' के अनुसार जन-सेवा और देशसेवा का आदर्श बहुत ऊँचा है। केवल इसका शोर मचाने और उसके द्वारा नाम कमाने से कुछ नहीं हो सकता। 'अलका' में स्नेहशंकर के माध्यम से वे कहते हैं: "...इन किसानों को केवल प्रारंभिक शिक्षा भी दे दें, तो उनके जेलवास से ज्यादा उपकार हो, और यह शिक्षा की सचाई सहृदयों की यथेष्ट संख्या-वृद्धि कर दे। ...किसी प्रकार का सुधार पहले मस्तिष्क में होता है। जहाँ मस्तिष्क ही न हो, वहाँ नेता की आवाज़ का क्या असर हो सकता है ?"

'निराला' का समाज के अगणित प्रहार सहने पड़े थे। वे स्वयं जीवन-पर्यन्त समाज द्वारा शोषित और उत्पीड़ित रहे। उन्होने इस पीड़ा का अनुभव किया था, इसीलिए उनके कथा-साहित्य में शोषितो और उत्पीड़ितों का बड़ा सहानुभूति-पूर्ण चित्रण मिलता है। उनके सम्पर्क में भी अनेक समाज-उत्पीड़ित व्यक्ति आये थे। और उन्होने अपना सब कुछ न्योछावर करके उनकी सहायता की थी। लखनऊ के अमीनाबाद मे एक पढ़े-लिखे ब्राह्मण लड़के को जूता-पालिश करते हुए उन्होने अपनी आँख से देखा था। वही लड़का 'निरुपमा' का नायक डी० लिट्० कृष्णकुमार है। 'निराला' की अनेक कहानियो के पात्र भी उनके सम्पर्क मे आये व्यक्ति है। 'चतुरी चमार', 'देवी', 'सुकल की बीबी', 'कला की रूपरेखा' और 'क्या देखा ?' के पात्रों को स्वय 'निराला' ने देखा-परखा था।

'निराला' पूंजीवादी समाज के प्रबल विरोधी थे, क्योकि इसके कारण ही समाज में वैषम्य और विकृति व्याप्त है। १९४३ के बाद से 'निराला' के आर्थिक और मानसिक कष्टो की कहानी आरम्भ हो जाती है। प्रकाशकों ने भी उनका खूब शोषण किया। उनकी 'सफलता' नामक कहानी में इसी शोषण की व्यथा है।

'निराला' बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न लेखक थे। संस्कृत, बंगला और अँगरेज़ी साहित्य एवं दर्शन का उन्हें गम्भीर ज्ञान था। इस संबंध में उन्होंने

मनन भी खूब किया था। संगीत से उन्हें विशेष रुचि थी। उर्दू ग़ज़लों और बंगला सगीत का गायन वे बड़े शौक़ से तन्मय होकर करते थे। वस्तुतः उनका शौक़, साहित्य-सर्जन सभी कुछ स्वांतः सुखाय था।

ऊपर के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि 'निराला' का जीवन स्वयं एक कथा है। उनका व्यक्तित्व एक युग-पुरुष के व्यक्तित्व का सा रहा। वह दिन दूर नही जब 'निराला' शब्द व्यक्तिवाचक संज्ञान रह कर एक दुर्दमनीय, निर्भीक और अजेय व्यक्तित्व के लिए प्रयुक्त होने वाली जातिवाचक सज्ञा बन जावेगा। देखने में भी 'निराला' का व्यक्तित्व बड़ा प्रखर और दिव्य था। एक विदेशी ने उनको 'जूलियस सीज़र' का अवतार कहा था; एक अमरीकी महिला पत्रकार ने उन्हें अपोलो का पुत्र कहकर पुकारा था और श्रीमती सरोजिनी नायडू को उन्हे देखकर यूनानी दार्शनिक होने का भ्रम हो गया था।

'निराला' की सम्पूर्ण कृतियो पर उनका यह व्यक्तित्व छाया हुआ है। उनका दयनीय से दयनीय पात्र बेबस, मजबूर और निर्बल नही है। उनमें विद्रोह की अमित शक्ति है, अन्याय से प्रतिकार की उत्कट भावना है और जीवन की नयी प्रेरणा है।

तत्कालीन परिस्थिति

'निराला' के जीवन एवं कृतित्व पर देशव्यापी तथा विश्वव्यापी परिस्थितियो का अमित प्रभाव पड़ा है; इसलिए यहाँ उनका संक्षिप्त आकलन करना समीचीन होगा। भारतवर्ष मे अग्रेज़ों के स्थायी रूप से बस जाने के उपरान्त, अनेक आवश्यकताओ के कारण अंगरेज़ी शिक्षा का त्वरित गति से प्रसार हुआ। अँग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त कर भारतवासी यूरोपीय आचार-विचार, वेशभूषा आदि की ओर ही आकृष्ट नही हुए, वरन् उनके मन का नए रूप में सघटन होने लगा[1]। भारतीय मध्ययुग तो श्रद्धा और विश्वास का युग था। किन्तु अंगरेज़ी शिक्षा प्राप्त कर भारतवासियों में तर्क-बुद्धि

१. फरखुहर : 'मार्डन रेलिजस मूवमेंट्स इन इंडिया', पृष्ठ २१, १९२९, लन्दन।

प्रबल हुई । वे भारतीय आचार-विचार, रीति-रिवाज, ज्ञान-परंपरा आदि को तर्क और विज्ञान की कसौटी पर कस कर देखने लगे । इस परीक्षा एवं विश्लेषण के फलस्वरूप उन्होंने अनेक भारतीय परंपराओं को तिलांजलि दे दी । यूरोपीय विज्ञान और ज्योतिष, राजनीति और अर्थनीति, समाज और धर्म ने भारतवासियों के जीवन में उथल-पुथल पैदा कर दी । उनमे पौराणिकता के स्थान पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण का जन्म हुआ । गैलेलियो, कार्पनिकस, मिल, मोर्ले आदि की विचारधारा ने भी भारतवासियो के विचार-परिवर्तन मे सहयोग दिया । तर्क-बुद्धि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ-साथ यूरोपीय उदारवादी विचारधारा ने उन्हें मानव सापेक्ष्य दृष्टिकोण भी प्रदान किया । देवी देवताओं के स्थान पर मनुष्य का मनुष्य के रूप मे, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक परंपराओ के मानव-सापेक्ष्य रूप मे मूल्य आँकने की उन्होने बहुत दिनो बाद चेष्टा की । इस आत्म-मथन तथा आत्म-विश्लेषण का परिणाम हमे भारतीय समाज एव धर्म सुधारवादी आंदोलनो मे दृष्टि-गोचर होता है । समाज सुधारवादी दृष्टिकोण की स्पष्ट रूप रेखा हमें राजा राममोहन राय के प्रयास से प्रारभ होती दीखती है, जिन्होंने १८१५ मे 'आत्मीय सभा' की स्थापना की। उन्होंने भारतीय समाज मे प्रचलित अंध-विश्वासो और रूढ़ियों को आमूल नष्ट करने का सक्रिय उद्योग किया । कहा जाता है कि उनकी किसी निकट संबधिनी को सती प्रथा का शिकार होना पड़ा था[1], जिससे उनका खून खौल उठा और उन्होंने अपनी सपूर्ण शक्ति उसका विरोध करने मे लगा दी । उन्होंने विधवा-विवाह पर भी बल दिया और वर्ण-व्यवस्था को हिन्दू-समाज का अभिशाप कह कर उसे समूल नष्ट करने का परामर्श दिया । इस प्रकार राजा राम मोहन राय ने भारतवासियों को नवचेतना प्रदान की और जैसा कि लार्ड मकनीकोल ने कहा है "वे भारत के नए युग के सूचना की रूप में आए"[2] —अक्षरशः सत्य है ।

---

१. मणिलाल सी० पारिखः 'द ब्रहम समाज', पृष्ठ ४, १९२१, राजकोट ।
२. जकरिया : 'रिनेसट इंडिया', पृष्ठ २०, १९३३, लन्दन ।

'ब्रह्म समाज' (१८२८) की नीव भी राजा राममोहन राय ने डाली। भारत की यह प्रथम बड़े पैमाने की संगठित संस्था थी, जिसने सुधारवादी दृष्टिकोण फैलाया। इसके सदस्य उच्च शिक्षा प्राप्त विद्वान् थे, जिन्होंने आधुनिक रीति से भारतीय सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों का विश्लेषण कर उनसे मुक्त होने और उन्हें नए रूप में ग्रहण करने का मार्ग प्रदर्शित किया। ये लोग आधुनिक सभ्यता के पुजारी नहीं, आधुनिक वैज्ञानिक रीति के उपासक थे। ज़करिया ने ठीक ही कहा है कि "ये मन से आधुनिक थे, तन से नही। आधुनिकता को अपनाने के लिए उन्होने किसी पाश्चात्य आधार की सहायता नही ली। अभिप्रायः यह कि इनकी आधुनिकता अपनी थी, किसी की दी हुई नहीं"[१]। 'ब्रह्म समाज' के क्रमशः प्रमुख कार्यकर्ता थे—राजा राममोहन राय, देवेन्द्रनाथ टैगोर और केशवचन्द्र सेन, जिन्होने जीवन-पर्यन्त समाज-सुधार का सक्रिय प्रयत्न किया। इन्होने बाल-विवाह को रोकने का अथक प्रयास किया। विधवा विवाह पर ज़ोर डाला, स्त्री शिक्षा का प्रचार किया तथा अछूतोद्धार का प्रयत्न किया।

'ब्रह्म समाज' की परंपरा में ही एक दूसरी सस्था 'आर्य समाज (१८७५) स्थापित हुई। इसके संस्थापक थे, दयानंद सरस्वती (१८२४–१८८३), जो अँग्रेज़ी शिक्षा-दीक्षा से अनभिज्ञ थे। ये वैदिक धर्म के अनन्य पुजारी थे और इन्होने आर्यो के वैदिक धर्म के पुनर्स्थापन को प्रोत्साहित किया। इनके विचार-विनिमय का माध्यम क्योंकि जनसाधारण की अपनी भाषा थी, फलतः सर्वसाधारण को प्रभावित करने मे वे अत्यधिक सफल हुए। अभी तक जितने सुधारवादी आंदोलन थे, वे जनता की सामान्य जीवन-धारा से एकाकार नही हो पाए थे। किन्तु 'आर्यसमाज का दृष्टिकोण अपनी सरलता और सर्वग्राह्यता के कारण जन-साधारण की अपनी चेतना, अपनी जागरूकता बन बैठा। सर्व साधारण ने स्वयं समाज की कुरूपता को पहचाना और उसका अनुभव किया। अतः जनता स्वयं अधिक उत्साह के साथ रूढ़ियों का यथा साध्य सुधार करने

---

१. ज़करिया : 'रिनेसेन्ट इंडिया', पृष्ठ २०, १९३३, लन्दन।

में जुट गई। आर्य-समाज के प्रचारकों ने वेदों से प्रमाण प्रस्तुत कर जनता को बताया कि हिन्दू-समाज की कुप्रथाएँ तथा रूढ़ियाँ असत्य, थोथी और निराधार है। उन्होंने बताया कि वर्ण व्यवस्था विधि का विधान या जन्म-गत न होकर व्यवसाय गत या कर्मगत है। इन्होंने ब्राह्मणों के हिन्दू-समाज पर एकाधिपत्य और मूर्तिपूजा तथा बहु-देववाद का भी खण्डन किया। आर्यसमाजियों ने यथासंभव अनाथालय, विधवाश्रम आदि बनवाये और दुर्भिक्ष पीड़ितों को सहायता पहुँचाई। वैदिक धर्म की शिक्षा देने के निमित्त इन्होने अनेक ऐसे स्कूलों की स्थापना की जिनमें भारतीयो को अपने आत्म-सम्मान का ज्ञान हुआ, और उनमे अपने पूर्वजों के प्रति आदर का भाव जागृत हुआ। 'आर्य समाज' के द्वारा देश भक्ति तथा राष्ट्रीयता की भावना का भी प्रचुर प्रचार हुआ। इस प्रकार आर्य समाज के क्रियात्मक उद्योग की रूपरेखा अत्यंत विस्तृत है।

रामकृष्ण मिशन के उद्योग से भी भारतवासियो में नव-चेतना आयी और अपनी कमजोरियों को दूर करने का उत्साह उनमे संचरित हुआ। रामकृष्ण परमहंस ने इस संस्था की नीव डाली और स्वामी विवेकानन्द ने इसके आदर्शो एवं विचारों का प्रचार तथा प्रसार कर इसे व्यापकता प्रदान की। रामकृष्ण मिशन मुख्यतः धार्मिक सस्था थी, किन्तु इसकी सेवाओं का क्षेत्र अत्यत व्यापक रहा। दुःखी मानवता की सहायता और कष्ट-मुक्त करना इसका मुख्य उद्देश्य रहा। इसने अनेक शिक्षालय, अस्पताल और सेवा समितियाँ खोलीं। स्वामी विवेकानद ने वेदांत और उपनिषद् के सिद्धान्तों की व्याख्या उन्नीसवी और बीसवी शताब्दी की आवश्यकताओ के प्रकाश में की और इस प्रकार पुरातन हिन्दू संस्कृति का पोषण किया। उनका कथन था कि भारत की पुरातन आध्यात्मिकता ही भारतवासियो को बल और साहस प्रदान कर सकती है।

अमरीका यात्रा से लौट कर उन्होंने अनुभव किया कि भारतीय आध्यात्मिकता अन्यत्र दुर्लभ है, और उन्हें यह देख कर दुःख होता था कि फिर भी भारतवासी निर्धनता की पीड़ा से ग्रस्त हैं; जब कि अमरीका की आध्यात्मिकता नगण्य है किन्तु धन की दृष्टि से वह अत्यंत उन्नत देश है। विवेकानन्द ने राष्ट्रीय एकता पर भी बल दिया और कहा कि राष्ट्रीयता

केवल राजनीतिक न होकर एक पवित्र आदर्श है। इस प्रकार रामकृष्ण मिशन द्वारा भारतीय समाज और राजनीति को उत्साहवर्द्धक विचार प्राप्त हुए जिससे इन क्षेत्रो में देशवासियो ने अनेक उद्यम किए।

इसी काल में एक अन्य सुधारवादी सस्था, 'थियोसोफ़िकल सोसाइटी' ने भी समाज-सुधार का कार्य किया। इस सबध मे एक बात विशेष और विचित्र है कि इसके समस्त कार्यकर्ता विदेशी थे। प्रारंभ मे श्री एच० पी० ब्लैवेट्स्की और औलकौट ने अमरीका मे इसकी स्थापना की थी। १८९३ मे श्रीमती एनीबेसेन्ट भारत आईं और यहाँ उन्होने थियोसोफ़ी का प्रचार किया। इनका उद्देश्य हिन्दुओ को अपने प्राचीन आध्यात्मिक दृष्टि-कोण की ओर उन्मुख करना था। श्रीमती एनीबेसेन्ट ने हिन्दू धर्म का आधुनिक वैज्ञानिक ढग से अध्ययन कर उसकी समीक्षा की और लोगों को भगवत् गीता के उपदेशो की आध्यात्मिकता से परिचित किया। एक विदेशी महिला को जब भारतीयो ने भारतीय रंग मे रँगते और उससे गौरान्वित होते देखा, तो वे विशेष रूप से प्रभावित हुए[1]। विशेषकर पढ़े लिखे लोगो और विद्यार्थियो को इससे प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला, उनमे आत्म-गौरव की भावना जागृत हुई और वे अपनी उपेक्षित पुरातन संस्कृति की ओर आकर्षित हुए।

इसी समय ईसाई मिशनरियों ने निम्नवर्गीय जनता को अपनी ओर आकर्षित करना आरंभ किया। अभी तक निम्नवर्ग उच्च और मध्यम-वर्ग की उपेक्षा और हेय दृष्टि का शिकार होता था। किन्तु ईसाई मिशनरियों ने इन्हें सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से देखा और इनके उद्धार का प्रयत्न किया। उन्होने उपेक्षितो को अँगरेज़ी शिक्षा दी और अपने धर्म से परिचित करा, उसे ग्रहण करने की प्रेरणा दी। वे इन्हें आर्थिक सुविधाएँ प्रदान करते थे और अच्छे कार्यों मे लगाते थे। ये लोग अँगरेज़ी बोलते थे और अंगरेजी ढग का खान-पान एव रहन-सहन अपनाते थे। सारांश यह कि इस चिर उपेक्षित वर्ग को ईसाई मिशनरियों ने अत्यंत सम्माननीय स्थान प्रदान

---

१. ज़कारिया : 'रिनेसेंट इंडिया', पृष्ठ ३२, १९३३, लन्दन।

किया। फलतः अत्यंत क्षिप्रगति से विपुल मात्रा में भारतीय जनता ईसाई होने लगी।

इन आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियों के फलस्वरूप भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन पैदा हुआ[1]। किन्तु यहाँ हमारा उद्देश्य इस राजनैतिक चेतना की रूपरेखा प्रस्तुत करना नहीं है। इस संबंध में जो तथ्य ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों में राजनीतिक समस्याओ पर विचार-विनिमय होने के साथ-साथ समाज-सुधारो पर भी विचार किया जाता था। कांग्रेस के प्रारंभिक अधिवेशनों में शराब और वेश्यावृत्ति के बहिष्कार तथा स्त्री-अधिकारों की माँग की गई थी[2]। महात्मा गाँधी के राजनैतिक क्षेत्र मे पदार्पण करने से तो समाज-सुधारवादी प्रवृत्ति को अतिशय बल मिला। गाँधी जी केवल राजनीतिक नेता नही थे। उनकी दृष्टि जीवन के सभी पक्षों पर थी। उनके द्वारा संचालित असहयोग आंदोलन ने नारी-जागरण, अछूतोद्धार, शिक्षा-प्रचार आदि के क्षेत्र में जो प्रभाव प्रदर्शित किया, वह, निस्सदेह अभूतपूर्व है। वैसे भी, वैलेन्टाइन शिरोल तथा अन्य विद्वानों के कथनानुसार, भारतीय राजनीतिक आंदोलन तो एक साधन मात्र था। इसका अंतिम उद्देश्य तो भारतीय सस्कृति की आत्मा को सुरक्षित रखना था।

अँग्रेजों के आगमन और उनकी शिक्षा का अच्छा या बुरा जो प्रभाव पड़ा, उसका सबसे घातक परिणाम यहाँ के आर्थिक जीवन पर परिलक्षित हुआ। अँगरेजो की आर्थिक नीति ने यहाँ के उद्योग धन्धे नष्ट किए और ग्राम-व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया। परिणाम यह हुआ कि देश के चारों ओर दरिद्रता का साम्राज्य छा गया। आए दिन दुर्भिक्ष पड़ने लगे और विविध प्रकार के रोगो ने भूखी जनता को धर दबाया।

---

१. रजनी पाम दत्त : 'इंडिया टुडे', पृष्ठ २५१, १९४७, बम्बई।

२. विस्तार के लिए देखें डा० बी० पट्टाभि सीतारामैया : 'कांग्रेस का इतिहास,' सं० सं०, पृष्ठ ५४, ५५; १९५८, दिल्ली।

अँगरेज़ों के आगमन से पूर्व भारत के ग्राम आत्म-निर्भर और समृद्ध थे[1]। यहाँ के ग्रामों की आत्म-निर्भरता कृषि और उसके सहायक कुटीर उद्योग धन्धों पर निर्भर थी। किन्तु अँगरेज़ों ने इस सुदृढ़ नींव को उखाड़ फेंका। उन्होंने अपनी कूटनीति द्वारा भारतीय भाई-भाई में फूट डालने की व्यवस्था की। अँगरेज़ों के शासन से पूर्व भारत में जो परंपरागत भूमि-व्यवस्था क़ायम थी, उसमें ज़मीन किसानों की सम्पत्ति समझी जाती थी। सरकार को उपज का एक भाग मिल जाता था। किन्तु अँगरेज़ों ने भारत की भूमि व्यवस्था ही बदल डाली[2] जिसमें किसान का जमीन पर से परंपरागत अधिकार हट गया। पं० जवाहरलाल नेहरू के अनुसार किसानों के लिए "धीरे-धीरे ज़मीन एक ख़रीदी हुई वस्तु बन गई। जो चीज़ पहले रिवाज के बल पर दृढ़ थी, वह अब रुपये के बल पर उखड़ गई।" किसानों के शोषण में अँगरेजो द्वारा नियुक्त जमीदारो ने पूर्व सहयोग दिया। ज़मीदार वर्ग अँगरेज़ों ने अपने स्वार्थवश उत्पन्न किया था। उनका विचार था कि अंगरेजों की एक बहुत छोटी-सी संख्या भारत की इतनी विशाल आबादी को दबाकर रखने में असमर्थ है, इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि वे एक नया वर्ग पैदा करके अपनी शक्ति के लिए एक नया आधार तैयार करें। यह वर्ग ऐसा होना चाहिए जिसे भारत की लूट में से चन्द टुकड़े मिलते रहें, जिससे स्वार्थवश यह वर्ग अँगरेज़ी राज क़ायम रखने में सहायता पहुँचाये[3]। अँगरेज अपनी इस कपट योजना में पूर्ण सफल हुए। लार्ड लिटन ने एक बार स्पष्ट शब्दो में कहा था कि "हिन्दुस्तानी समाज की ये अनुदार ताकतें, जिनमें ज़मीदार शामिल

---

१. कार्ल मार्क्स और एंगल्स ने अँग्रेज़ों के आगमन से पूर्व भारतीय ग्रामों की आत्म-निर्भरता, सम्पन्नता और आपसी सहकारिता एवं शांतिमय वातावरण का प्रशंसात्मक वर्णन किया है। विस्तार के लिए देखें—उन्हीं का 'सलेक्टेड वर्क्स', पृष्ठ ३१६–३१७, जिल्द १, १९५०, मास्को।

२. रजनी पाम दत्त : 'इंडिया टुडे', पृष्ठ १८४–१८५; १९४७, बम्बई।

३. वही, १९२।

हैं भारत में अँगरेज़ी शासन के सबसे बड़े समर्थक है[1] । यही कारण है कि जब भारत की जनता संघर्ष कर रही थी, और किसानों के संघर्ष राष्ट्रीय आंदोलन की मुख्य प्रेरक शक्ति बने हुए थे, तब हर प्रान्त में जमीदार संघ, ज़मीदार एसोसिएशन, या ऐसी ही दूसरी संस्थाएँ अँगरेज़ी राज की वफ़ादारी की क़समे खाया करती थी[2] । ऐसी भूमि-व्यवस्था होने के कारण किसानों की दशा बुरी होती गई । जमींदारों ने लगान वसूली के दूषित तरीके अपनाये । यदि कोई किसान समय पर लगान देने में असमर्थ होता, तो निर्दयता पूर्वक उसके अनाज, मवेशियों तथा घर की अन्य वस्तुएँ नीलाम कर दी जाती थी, झोपड़ियाँ जला दी जाती थीं, तथा उस पर अन्य अनेक अमानुषिक अत्याचार किये जाते थे । खेती पर जरूरत से ज़्यादा भार, कृषि-साधनों की अपर्याप्तता और दैवी संकटों के कारण किसानों की दशा उत्तरोत्तर बिगड़ती गई[3] । गाँवों में भुखमरी तथा अकाल इसी समय में पड़ने आरंभ हुये ।

अँगरेज़ों ने किसानों का अन्य उपायों से भी शोषण किया । उन्होंने स्वार्थवश किसानों को ऐसे कच्चे माल का उत्पादन करने को बाध्य किया, जिसकी माँग विदेशी बाजारों में अधिक थी । परिणामतः भारत से कच्चे माल का निर्यात और विदेशी, विशेषतः इंग्लैंड से मशीन की बनी वस्तुओ का आयात होने लगा । इसके कारण भारत के कुटीर उद्योग धन्धे, जो भारतीय किसानों के जीविकोपार्जन के सहायक आधार थे, आप से आप नष्ट हो गए । भारतीय किसान साल में छः महीने कृषि कार्यो से निवृत रहता था, जिस अवधि मे वह चर्खा कातने कपड़ा बुनने, रस्सी बटने, टोकरी तथा इस प्रकार के अन्य अनेक हाथ

---

१. ए० आर० देसाई : 'सोशल बैकग्राउन्ड आफ़ इंडियन नेशनलिज्म', पृष्ठ १५९, १९५९, बम्बई ।

२. रजनी पाम दत्त : 'इंडिया टुडे', पृष्ठ १९२–१९३, १९४७, बम्बई ।

३. विस्तार के लिए देखें—वही, पृष्ठ १६५–१८२

की वस्तुएँ बनाने में व्यस्त रहता था। इससे उसका जीवन-यापन सरल और सतोषजनक था। किन्तु मशीन की बनी वस्तुओ और अँगरेज़ों की दूषित कर नीति के कारण इन वस्तुओं की माँग पूर्णतया समाप्त हो गई। फलतः किसानों को पूर्णतः भूमि पर ही आश्रित होना पड़ा, जिससे ज़मीन पर अनावश्यक बोझ पड़ता गया और प्रति व्यक्ति आय घटती गयी। अँगरेज़ों की धन-लिप्सा और पाशविकता ने भारतीय ग्राम-व्यवस्था और सुख शांति को भग कर दिया।

अँगरेज़ो के समय भारत मे कुछ बड़े बड़े कारख़ाने और मिले खुली। १९११ मे जमशेद जी टाटा ने लोहे और फ़ौलाद का कारख़ाना खोला। अन्य अनेक कारख़ाने भी खोले गये। अभिप्राय यह कि कृषि प्रधान देश में अब औद्योगीकरण का विकास होने लगा था। फलतः बेकार किसान उदर-पूर्ति के लिए मजदूरी करने लगे। सम्पत्तिविहीन किसान अब मज़दूर बनने लगे। किन्तु यहाँ भी उनके साथ न्याय नही हुआ। मज़दूरों की माँग और पूर्ति की भयकर असगति देख मिल-मालिक मज़दूरों की कमजोरी से लाभ उठाते थे। बेचारा मजदूर पिस जाता था। मजबूरी उससे सब कुछ करा लेती थी। रहने के लिए उसके पास आवास नही थे, और मज़दूरी भी इतनी न थी कि वह उससे पर्याप्त भोजन और वस्त्र प्राप्त कर सके। १९२८ में ब्रिटेन की ट्रेड यूनियन कांग्रेस के प्रतिनिधि मंडल और १९३८ में भारतीय मजदूरों के प्रतिनिधि एस० वी० परूलेकर ने जनेवा मे अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर सम्मेलन के सामने जो रिपोर्ट दी थी, उनसे तत्कालीन मज़दूरों की दुरवस्था का पता चलता है[1]। एक छोटी और गंदी कोठरी में अनेक मजदूर परिवार रहते थे। उनके स्वास्थ्य का बीमा नही होता था, बुढ़ापे की पेंशन नहीं मिलती थी और उनकी शिक्षा की भी कोई व्यवस्था न थी। बहुत समय तक भारत के किसान और मज़दूर शांत बने रहे, किन्तु रूसी-क्रांति (१९१७) से उनमें आत्म-चेतना की भावना जागी और वे अपनी स्थिति

---

१. विस्तार के लिए देखें—रजनी पाम दत्त : 'इंडिया टुडे', पृष्ठ ३१८–३२१, ३३०; १९४७, बम्बई।

में सुधार की माँग करने की ओर उन्मुख हुए। एक ओर किसानो ने निर्दयी ज़मीदारी प्रथा को मिटाने का सघर्ष करना आरभ किया और दूसरी ओर मज़दूरों ने बीसियों 'ट्रेड यूनियनें' बना कर अपने अधिकारो के लिए लड़ना आरंभ कर दिया। इसी काल (१९२०) में 'अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस' की स्थापना हुई, जिसके सभापति थे लाला लाजपतराय।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध मे भारत मे पूँजीपति वर्ग के उदय के साथ-ही-साथ नए शिक्षित मध्यम वर्ग—अध्यापको, वकीलो, डाक्टरो, सरकारी कर्मचारियो और क्लर्को का नवीन वर्ग भी उत्पन्न हुआ। यह वर्ग अँगरेजी शिक्षा प्राप्त था। इसी वर्ग ने सुधारवादी आंदोलनो और राष्ट्रीय चेतना तथा अँगरेजो द्वारा भारत के शोषण की ओर भी ध्यान दिया[1]। किन्तु आर्थिक दृष्टि से इस वर्ग की दशा भी बहुत अच्छी नही थी। एक तो यह वर्ग परमुखापेक्षी हो गया था, दूसरे इसका वेतन अत्यल्प था। उस पर भी यह विविध प्रकार के करो से लदा हुआ रहता था। काले-गोरे के भेद-भाव के कारण यह वर्ग उच्च-सरकारी पद भी प्राप्त न कर पाता था। अतः स्पष्ट है कि अँगरेजी शासन काल मे भारत के सभी वर्गो का जन-समुदाय सत्रस्त था। पं० जवाहर लाल नेहरू ने ठीक ही कहा है कि किसान, मजदूर और मध्यम श्रेणी किसी की दशा अच्छी न थी[2]।

'निराला' का कथा-साहित्य उनकी जीवनगत परिस्थितियो, संस्कारों एवं विविध मनोदशाओ के अतिरिक्त तत्कालीन समाजिक-अवस्था और तद्विषयक आन्दोलनो से प्रभाव ग्रहण कर निर्मित हुआ है। उनके

---

१. वही, पृष्ठ २५५।

२. The peasantry were servile and fear-aridden, the industrial workers were no better. The midde classes, the intelligentsia, who might have been beaconlights in the enveloping darkness, were themselves submerged in this prevailing gloom."—'डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया,' पृष्ठ ४२५-४२६, १९४६, कलकत्ता।

कथा-साहित्य का उद्देश्य सुधारवादी आंदोलनों की भाँति सुधार करना नही है। 'निराला' समस्याओ और सामाजिक स्थिति को ज्यो का त्यो प्रस्तुत करने मे अत्यत दक्ष थे, किन्तु उनकी प्रकृति उपदेश देने की नही थी। इसीलिए उनका कथा-साहित्य विचारोत्तेजक है। सामाजिक विषमता ओर विकृति को देख पाठक के मन मे उसके प्रति अपने आप ही वितृष्णा गौर घृणा उत्पन्न हो जाती है, जिससे वह उनसे मुक्त होने की बात सोचने लगता है। अतः 'निराला' का दृष्टिकोण बड़ा ही स्वस्थ है ओर उनके कथा-साहित्य मे समाज के परिष्कार की प्रच्छन्न भावना सन्निहित है।

अध्याय २

'निराला' के रोमांटिक उपन्यास

'निराला' के उपन्यासो को दो प्रकार मे बाँटा जा सकता है—रोमांटिक उपन्यास और यथार्थवादी उपन्यास। 'निराला' के प्रारम्भिक उपन्यास—'अप्सरा' (१९३१), 'अलका' (१९३३), 'निरुपमा' (१९३६) और 'प्रभावती' (१९३६) रोमाटिक है। 'प्रभावती' की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है और इसलिए उसे ऐतिहासिक उपन्यास कहा जा सकता है, किन्तु इतिहास के साथ साथ उसमे रोमास का भी गहरा पुट है।

'निराला' के रोमांटिक उपन्यासो की सबसे बडी विशेषता है, उसके स्वच्छद पात्र। जिस भाँति 'निराला' ने कविता मे मुक्तक छदों की अवतारण की, उसी भाँति कथा-साहित्य मे स्वच्छद व्यक्तित्व के पात्रों का सृजन किया। इन पात्रो के चरित्र की स्वतत्रता सभी क्षेत्रो मे प्रकट हुई है, किन्तु प्रेम के सबध मे वह सबसे अधिक व्यक्त हुई है। 'निराल' ने परपरागत प्रेम-भावना मे अनेक विषमताएं और विकृतियाँ देखीं। फलस्वरूप उन्हें इसके स्थान पर किसी नवीन, साथ ही हितकर मान्यता की प्रतिष्ठा करनी आवश्यक प्रतीत हुई। फलतः उन्होने ऐसे पात्रो की अवतारणा की जो समाज की रूढ़िग्रस्त मान्यताओ को तोड़ वैयक्तिक मान्यताओ द्वारा निर्धारित प्रेम का पोषण करते हो। 'अप्सरा', 'अलका', 'निरुपमा' ओर 'प्रभावती' चारो रोमाटिक उपन्यासो के पात्र उन्मुक्त व्यक्तिवादी प्रेम के पोषक है। इन सबके नायक-नायिका प्रेम के सबध मे स्वतत्र धारण रखते है। इनमे से एक का भी विवाह समाज-विहित आधार पर नही होता। अपना अपना जीवन-साथी वे स्वयं चुन कर स्वयं ही विवाह करते है।

'निराला' के समस्त रोमांटिक उपन्यासों की कथा-वस्तु प्रेम संबंधी है। नायक-नायिका के प्रणय को लेकर ही प्रत्येक उपन्यास का कथा-तन्तु निर्मित हुआ है। नायक नायिका प्रथम दृष्टि-विनिमय मे ही प्रणय ग्रस्त हो जाते है। नायक नायिकाएँ स्वस्थ, सुदर और युवा है। नायक ऊँचे कुल के सुशिक्षित तरुण नागरिक है। नायिकाएँ सोलह और अठारह साल की खिली या अधखिली कलिकायें है। वे सौदर्य की सजीव प्रतिमा है और उनके तन-मन मे उन्मुक्त प्यार हिलोरें लेता रहता है। 'अप्सरा' मे लेखक ने नायिका की अवस्था, रूप, हाव-भाव का वर्णन बड़ी काव्यात्मक भाषा मे किया है : "कनक धीरे-धीरे अठारहवे वर्ष के पहले चरण मे आ पड़ी। अपार अलौकिक सौदर्य, एकांत मे, कभी-कभी अपनी मनोहर रागिनी सुना जाता, वह कान लगा उसके अमृत स्वर को सुनती, पान किया करती। अज्ञात एक अपूर्व आनद का प्रवाह अगो को आपाद-मस्तक नहला जाता, स्नेह की विद्युत्-लता काँप उठती। उस अपरिचित कारण की तलाश मे विस्मय से आकाश की ओर ताककर रह जाती। कभी-कभी खिले हुए अगो के स्नेह-भार मे एक स्पर्श मिलता, जैसे अशरीर कोई उसकी आत्मा मे प्रवेश कर रहा हो। उस गुदगुदी मे उसके तमाम अग काँप कर खिल उठते। अपने देह के वृत्त पर अपलक खिली हुई ज्योत्सना के चन्द्र-पुष्प की तरह, सौंदर्योज्ज्वल पारिजात की तरह एक अज्ञात प्रणय की वायु से डोल उठती। आँखो मे प्रश्न फूट पड़ता, ससार के रहस्यो के प्रति विस्मय। .....कनक अब कली नही, उसके अगो के कुल दल खुल गये हैं, उसके हृदय के चक्र मे चारो ओर के सौदर्य का मधु भर गया है।" प्रस्तुत चित्रण हिन्दी रीतिकालीन श्रृगारी कविता से किसी भी अर्थ में कम नही है।

'निराला' प्रेम वर्णन में खूब रमे है। किन्तु उनके प्रेमियों के प्रणय में किसी भी प्रकार की उच्छश्रृखलता और छिछलापन नही है। उनका प्रेम शारीरिक सान्निध्य में प्रकट नही होता, वरन् उनके प्रेम मे शुद्ध सात्विकता का मिश्रण हुआ है। दूसरे शब्दो मे हम उन्हे 'प्लेटोनिक लव' का उपासक कह सकते है। वे परस्पर खुलकर अपना प्रेम प्रकट

नही करते और मौन बने रहते है । इस प्लेटोनिक प्रेम का अंकन 'निराला' ने जब भी किया है, वह अद्वितीय बन पड़ा है। निराला' के नायक-नायिका की दृष्टि एक दूसरे को छूकर चली आती है। 'प्रभावती' मे इस प्रथम दृष्टि-विनिमय का वर्णन द्रष्टव्य है; "कुमार की प्रिय मुग्ध दृष्टि से कुमारी के हृदय मे विजय का गर्व चपल हो उठा। पर सयम की शक्ति से उसे अपनी ही सीमा मे उसने बाँध रखा, केवल आँखों की ताराओ से उल्लास की ज्योति विच्छुरित होने लगी ।"

निराला के रोमाटिक उपन्यासो मे छायावादी कल्पनाप्रियता का गहरा रग है। इन उपन्यासो के कथानक, पात्र और वातावरण चलचित्र के कथानक, पात्र और वातावरण से पूरा-पूरा साम्य रखते हैं। पात्र और उनके चारो ओर का वातावरण यथार्थ भूमि पर स्थित न होकर काल्पनिक भूमि पर स्थित है। चरित्र छायावादी प्रभाव से अवगुंठित है। यही कारण है कि 'निराला' द्वारा उठाई अनेक समस्याओं का समाधान भी कभी-कभी काल्पनिक-सा लगने लगता है। प्रणय-समस्याओं का समाधान तो नितान्त काल्पनिक है। किन्तु कुछ ऐसी समस्यायें भी है, जिनका हल 'निराला' ने अपने ढग से किया है। 'निराला' से पूर्व वेश्या और विधवा समस्या पर लेखको ने अपने-अपने ढंग से प्रकाश डाला था और उसे भिन्न भिन्न ठग से हल किया था। प्रेमचद ने वेश्या और विधवा की समस्या को आर्थिक प्रश्न के रूप मे लिया था और यह समाधान प्रस्तुत किया था कि इनका विवाह होने या किसी आश्रम के खुल जाने से इनकी आर्थिक समस्या हल हो जावेगी जिससे प्रकारान्तर से इनकी दुरावस्था मे सुधार हो जावेगा। किन्तु 'निराला' ने वेश्या और विधवा के प्रश्न को कभी इस रूप मे नही लिया। उन्होने इसका विवाह इसलिए आवश्यक बताया कि यह नारी की नैसर्गिक आवश्यकता है। विवाह से वेश्या और विधवा का कुठित जीवन उन्मुक्त प्रवाह ग्रहण कर सकेगा। 'अप्सरा' की वेश्या-पुत्री कनक और 'अलका' की विधवा वीणा का विवाह लेखक इसी उद्देश्य से कराता है। नैसर्गिक कामनाओं की तृप्ति, उन्मुक्त वातावरण के लिए विधवा कितनी विह्वल हो उठती है यह 'अलका' में दृष्टव्य है: वीणा सोचकर, रोकर आप ही आँचल में आँसू पोंछ लेती है—"क्या विधवा-

जैसी दुखी विधाता की दूसरी भी सृष्टि होगी, जो सखियों में भी खुले प्राणों से बातचीत नही कर सकती, भोग-सुख वाले संसार के बीच मे रहकर भी भोग-सुख से जिसे विरत रहना पड़ता है, आँख के रहते भी जिसे चिर-काल तक दृष्टि-हीन होकर रहना पड़ता है।"

"कैसे दो परस्पर विरोधी सग्राम वीणा के जीवन मे छिड़े है। एक ओर तो मरुस्थल के पथिक का-सा चित्र सदैव व्याकुल है, दूसरी ओर उसके जीवन की अदृश्य अप्सरा, अपनी सोलहो कलाओ से विकसित, उसके हृदय के तारो को खीच-खीच कर कढ़ रही है—प्रति जीवन की रंग-भूमि मे जैसे मृदु चरण उतरकर अपनी वासना-विह्वल नई रागिनी गाया करती है, गाना चाहती है; यह ज्ञान नही कि विधवा है—इसके उज्ज्वल वस्त्र पर काले छीटे पड़ेगे—जीवो की साँस-साँस पर पैदा हुई प्राण-प्रियता मे बाँध कर चिर-अधीन कर रखने वाली प्रकृति देह की विटपी को वासतिक पृथुल-पल्लव-भार, सुमनाभरण, सौरभ-मद से भर रही है। मनुष्य के कानून का कोई मूल्य होता, यदि वह पूर्ण के लिए पूर्ण कुछ होता, तो प्रकृति भी उस मर्यादा को मानकर, उसके सामने आँखे झुकाकर चलती। चिर अभ्यास से बँधा वीणा का रुचिर मन भीतर के इस अपार उत्सव मे इसीलिए आप-ही-आप सम्मिलित हो जाता है, जब कि यह मन की ही एक स्वतत्र रचना है, जहाँ वीणा को उसके ससार के यज्ञ मे श्रेष्ठ भाग लेने के योग्य बना दिया है।"

"तब वीणा अपने एकमात्र आश्रय स्वामी जी को सोचकर, उनकी निश्छल-निश्छल सहानुभूति मे डूबकर, स्वप्न के भीतर जैसे मंद-मंद पद-चाप प्रणय से हिलते हृदय से साथ-साथ फिरती हुई स्नेह और सौदर्य की अपलक आँखो से देखती रहती है। स्वामीजी को वह क्यो प्यार करती है, वह नही जानती; वह प्यार करती है, किसी से कह नही सकती, प्यार न करे, ऐसा नही हो सकता।"

'निराला' के समस्त रोमांटिक उपन्यासो का कथानक लगभग समान है। सभी उपन्यासो को नायक नायिका परस्पर प्रणय-विमुग्ध होते है और अनेक विघ्नो तथा सघर्षो के बाद अंत में एक दूसरे को प्राप्त करते हैं। प्रणय के साथ -साथ लेखक नायक नायिका को समाज सेवा

में भी संलग्न दिखाता है। वे किसान और मजदूरो के सम्पर्क मे आते हैं इसलिए लेखक को इस प्रासगिक कथा की भी सयोजना करनी पड़ती पड़ती है। अतः नायक के दो रूप मिलते है—एक प्रणयी, दूसरा समाज-सेवी। पहले से, सबधित कथानक मुख्य है और दूसरे से सबधित कथानक गौण। लेखक ने इन दोनो कथाओ के सूत्रो को एक-दूसरे से जोड़ने मे यथेष्ट कौशल से काम लिया है, तथापि कभी-कभी कथा-तन्तु एक दूसरे से छिटक कर दूर पड़ जाते है। इससे उपन्यासो का वस्तु-सगठन शिथिल हो गया है। 'अप्सरा' के वस्तु-सगठन मे ऐसी ही शिथिलता है। यह उपन्यास घटना-प्रधान है और घटनाएँ भी इतनी अधिक है और असाधारण है कि सहसा उन पर विश्वास नही होता। इसके अतिरिक्त इसके कथानक से सबधित पात्र एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरण करते रहते है, जससे कथानक को भी अनेक स्थलो पर घूमना पड़ता है। फलतः उपन्यास की वस्तु सयोजना आप से आप शैथिल्य दोष से ग्रस्त हो गई है। 'निराला' के 'अलका' का वस्तु-सगठन भी इसी प्रकार दोष युक्त है। यह उपन्यास भी घटना-प्रधान है और इसमे भी मुख्य कथा के साथ कई अवान्तर कथाएँ जुड़ी है। इन गौण कथाओ और उनसे सबधित पात्रो की गति एक ओर अवश्य है, किन्तु वे एक-दूसरे से इतने अधिक अलग-अलग रहते है कि कथानक मे बिखराव उत्पन्न हो गया है। विजय की वाग्दत्ता पत्नी शोभा, बाद की अलका, एक ओर समाज-सेवा मे रत है : विजय दूसरी ओर ; और विजय का मित्र अजित तीसरी ओर। तीनो का कार्य -क्षेत्र भी दूर-दूर रहता है, यद्यपि बाद मे तीनो अनजाने ही एक स्थान पर एकत्र हो जाते है। इसके अतिरिक्त तीनो की प्रेम-कथाएँ भी अलग-अलग चलती है। यदि विजय और शोभा की प्रणय-कहानी एक ही मान ली जाय, तब भी अजित और वीणा की प्रेम-कथा को मुख्य कथा से सयुक्त नही किया जा सकता। अजित अपने मित्र की वाग्दत्ता पत्नी को खोजने निकलता है, किन्तु पड़ जाता है वीणा के प्रेम-आकर्षण मे। उसका साधु-वेष और लोक-सेवा भी एक ढोग ही बन कर रह जाता है। स्पष्ट ही, अजित और वीणा की प्रेम-कथा एक स्वतत्र कथा प्रतीत होती है। और जब उपन्यास की कोई अप्रमुख कथा या प्रसंग ही मुख्य कथा से अलग

अस्तित्व रखे, तब उसके कथानक मे सुसगठन कैसे संभव हो सकता है ? या तो लेखक 'अप्सरा' तथा 'अलका' के नायक एव पात्रो के क्रांतिकारी रूप को प्रकाश मे ही न लाता, यदि लाना आवश्यक ही समझता तो उसे उनके इस रूप को और अधिक गहरा रग देना था। इससे एक ओर तो पात्रो का व्यक्तित्व अधिक प्रभावशाली बन जाता, दूसरी ओर वस्तु-सगठन मे विशृखलता न आने पाती। किन्तु इसके अभाव मे उपर्युक्त उपन्यासो के नायक नायिका का क्रांतिकारी रूप प्रयास से जोड़ा हुआ प्रतीत होता है, और वह मुख्य कथा अर्थात्, उनके प्रणयी वाले रूप से घुलमिल नही पाया है। वे थेगली से अलग लगते है। 'अप्सरा' तथा 'अलका' का कथा-तन्तु ढीला अवश्य है, किन्तु उनमे रोचकता का अभाव नही है। विशेष कर 'अप्सरा' मे तो सरसता और मनोरंजन के अनेक स्थल है। कनक और दरोगा तथा कनक और मिस्टर हैमिल्टन की बातचीत एव आचरण से हास्य की सृष्टि हुई है।

'निरुपमा' मे आकर 'निराला' का वस्तु-सगठन परिष्कृत हो गया है। वैसे तो इसमे भी कई प्रासगिक कथाएँ है, किन्तु वे सब मूल कथा मे इस भाँति जुड़ी है कि उनका पृथक अस्तित्व प्रतीत नही होता, वरन उन्हें निकाल दिया जाय तो उपन्यास का आकर्षण मारा जाय। 'निरुपमा' की मुख्य कथा है—जमोदार निरू और ब्राह्मण युवक कुमार के मौन प्रणय की। इसमे बीच-बीच मे ग्रामीण समाज और वातावरण का जो चित्रण हुआ है, वह जमीदार निरू से संबधित होकर आया है, उससे पृथक उसका अस्तित्व नही है। ग्रामीण महिलाओं से निरू की बातचीत तथा गरीब और समाज में उपेक्षित व्यक्तियो के प्रति उसकी सहानुभूति नीरू के चरित्र के अनेक गुण प्रकट करती है। यामिनी बाबू तथा मिस दुबे वाली कथा भी निरुपमा की कहानी से अनिवार्य रूप से संयुक्त है। मिस दुबे के प्रसग के कारण ही 'निरुपमा' का अप्रत्याशित अत बड़ा आकर्षक हो गया है। अतएव, 'निरुपमा' मे मुख्य कथा के साथ कई अवान्तर कथाएँ भी है, तथापि कथानक के सूत्र कही उलझने नही पाये है। मूल कथा सीधी चली है और अवान्तर कथाएँ बीच-बीच में आकर

इस भाँति मिल गई है, जैसे उनका लक्ष्य वही हो। इससे कथानक मे रोचकता, आकर्षण और उत्सुकता उत्पन्न हुई है।

'प्रभावती' का वस्तु-सगठन अधिक गु फित नही है। इसमे भी अनेक प्रासगिक कथाएँ है जिनसे कथानक मे शिथिलता उत्पन्न हुई है। सरदारों के षड्यत्रो और राजनीतिक युद्ध एव दाँव-पेचो के कारण इसकी कथा कभी-कभी उलझने सी लगती है, किन्तु वहाँ लेखक बड़े कौशल से उसे सुलझा देता है। हाँ, 'प्रभावती' के कुछ अतिरंजित प्रसग और घटनाएँ पाठको को तिलस्मी उपन्यासो जैसी अवश्य प्रतीत होने लगती है।

'निराला' के कथानक मे वैचित्र्य और नाटकीयता अनिवार्य रूप से विद्यमान रहती है। फलतः उनके उपन्यासो के वस्तु-सगठन मे सयोगो और चमत्कारिक घटनाओ का महत्वपूर्ण योग हुआ है। प्रत्येक उपन्यास के कथा-विकास मे विविध प्रकार की अतिरंजित घटनाएँ है। नायक नायिका का मिलन-सयोग तो नाटकीय ढग से होता ही है, अनेक समस्याओं का समाधान भी 'निराला' बड़े नाटकीय स्तर पर करते है। 'अलका' मे विजय और शोभा का मिलन, 'निरुपमा' में निरू और कुमार का विवाह एक संयोग ही है। सयोगो पर आधारित कथा-भाग अत्यत नाटकीय होने के कारण चल-चित्रों के ढग का-सा लगने लगता है।

'निराला' के उपन्यासो के वस्तु-सगठन मे वहाँ भी किंचित शिथिलता आ गई है जहाँ वे कथा-प्रवाह को रोककर राजनीति धर्म और दर्शन की व्यवस्था करने मे रम जाते है। 'अप्सरा', 'निरुपमा' और 'प्रभावती' मे तो ऐसे स्थल कम ही है, किन्तु 'अलका' मे इस प्रकार के विश्लेषण की भरमार है।

अस्तु; वस्तु-संगठन की दृष्टि से 'निराला' के उपन्यास साधारण न होते हुए भी बहुत उच्च कोटि के नही है। किन्तु वस्तु-सगठन की कतिपय न्यूनताओ के रहने पर भी 'निराला' के उपन्यासो मे कोई ऐसे गुण है, जो पाठको को ऊबत से बचा लेते है और एक विशेष प्रकार का रसास्वादन प्रदान करते है। हास्य-विनोद पूर्ण वार्तालाप तथा काव्यात्मक भाषा ने उपन्यासो मे सरसता और रोचकता उत्पन्न कर दी है।

'निराला' के उपन्यासो मे और कुछ हो या न हो, देश-काल चित्रण

अद्‌भुत है। चाहे रोमाटिक उपन्यास हो या ऐतिहासिक या व्यंग्य चित्र सभी मे देश-काल सजीव हो उठा है। रोमाटिक उपन्यासो मे तत्कालीन शिक्षित युवक, सामन्तशाही वर्ग और किसान तथा मजदूरो के जीवन, गति-विधि और मनोभावो का सूक्ष्म अकन हुआ है। तद्‌युगीन शिक्षित युवक समुदाय रूढ़ि मुक्त तो होना चाहता था, किन्तु उसके सस्कारो की जड़े इतनी मज़बूत और गहरी थी कि उन्हे तोड़ने का साहस वह बड़ी कठिनता से सचित कर पाता था। सामाजिक नियमो का उल्लघन करने के निमित्त उसे अनेक मानसिक द्वन्द्व और सामाजिक सघर्षो का सामना करना पड़ता था। 'अप्सरा' का नायक राजकुमार अनेक सकल्प-विकल्प के उपरान्त अपने मित्र और उसकी पत्नी के अथक प्रयत्नो से प्रेरणा ग्रहण कर वेश्या-पुत्री कनक से विवाह कर पाता है। यह कमजोरी राजकुमार की ही कमजारी नही, तत्कालीन प्रत्येक मध्यमवर्गीय शिक्षित युवक की कमजोरी थी। किन्तु धीरे-धीरे यह वर्ग अपनी दुर्बलता पर विजय पा रहा था, जिसकी स्पष्ट प्रतिच्छाया हमे 'निरुपमा' के कुमार मे मिलती है। 'निरुपमा' का नायक समाज से ही नही, अपने सस्कारो से भी लड़ने का अटूट अदम्य साहस रखता है। ब्राहमण कुल का और सुशिक्षित होने पर भी वह चमार का काम खुले समाज मे करता है।

'निराला' के उपन्यासो के ग्राम्य-वातावरण के चित्रण मे तत्कालीन ग्रामीण जीवन और परिस्थितियाँ खूब उभर कर आई है। पूर्व-पीठिका मे हम इस बात का विस्तार से उल्लेख कर चुके है कि अँगरेजो के आगमन से पूर्व तथा बाद मे गाँवो की क्या दशा थी और जनता मे किस भाँति उसका विरोध करने की भावना जोर पकड़ रही थी। जब अपने देशवासी ही अपने भाइयो पर अत्याचार करने लगे, जमीदार, थानेदार, पटवारी आदि अँगरेजो की तरह शह पाकर उनसे अमानुषिक व्यवहार करने लगे तथा उनकी इज्जत लूटने लगे, तो धीरे-धीरे किसानो मे भी इन अत्याचारो के प्रतिकार की भावना जागृत हुई। प्रतिक्रिया-स्वरूप १९२३–१९२४ मे उत्तर-प्रदेश मे पहला किसान आंदोलन उठ खड़ा हुआ। फिर १९२९ के लगानबन्दी आंदोलन ने इतना जोर पकडा कि १९३०–१९३१ तक

किसान आंदोलनो की जड़ें मज़बूत हो गई और सरकार को उनके साथ समझौता करना ही पड़ा ।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि मे हमे 'निराला' का देश-काल चित्रण देखना है । हमारे देश की सारी दुरवस्था का उत्तरदायित्व अँग्रेजो पर था। 'अप्सरा' में लेखक ने अँग्रेज शासको के प्रति तीव्र घृणा व्यक्त की है । जमीदारो के शोषण, अत्याचार, षड्यत्र और कामुकतापूर्ण कृत्यो और किसानो के उत्पीड़न तथा कष्टो की करुण गाथा से समस्त उपन्यास भरे पडे है । 'अलका' मे लगभग नौ पृष्ठो मे लेखक ने जमीदारो की नीचता, उनकी शोषक वृत्ति और अँग्रेजो से मिले रहने का उद्घाटन किया है। यही नही, जमीदारो ने गाँव की बहू बेटियो की इज्जत भी लूटी है, जिसका वर्णन लेखक ने कभी स्वय किया है और कभी पात्रो से कराया है। लेखक के शब्दो मे : "पहले शहर के गृहस्थो से, जहाँ शौकीन शाह वाजिदअली का आदर्श है, रुपए के बदले रूप लिया जाता रहा, पर यह प्रथा गावो तक फैली हुई है। देहाती रूपसियो की निर्दोषिता साहबो को पसद आई, इसलिए धीरे-धीरे गाँवो पर धावे होने लगे । देहात की सुदरी विधवाए, भ्रष्ट की हुई अविवाहिता युवतियाँ, एकमात्र माता जिनकी अभिभाविका थी, और अपना खर्च नही चला सकती थी, और इस तरह के लब्ध अर्थ से लड़की का धोखे से ब्याह कर देना चाहती थी, लगान की छूट, माफ़ी आदि पाने की गरज से, कुटनियो के बहकावे मे आकर, चली जाती या भेज दी जाती थीं। लौट आने पर किसी रिश्तेदारी की जगह जाने वाले कारण गढ लिए जाते थे । जमीदार के लोग स्वयं सहायक रहते है, कोई डरावनी बात न होने पाती थी । विश्वासी जिलेदार इस तरह के मामलों मे सूराख लगाने वाले सौदा तय करने वाले थे।" जमीदारो के दूषित कृत्यो के साथ 'निराला' ने तहसीलदार, थानेदार, पटवारी आदि के भी अमानवीय कृत्यों और षड्यत्रो का उद्घाटन किया है ।

इन उपन्यासो मे किसानो के जीवन और उनके मनोभावो का भी सफल अंकन हुआ है । किन्तु 'निराला' द्वारा चित्रित यह किसान वर्ग १९२९–१९३२ तक के किसान आंदोलन से पूर्व का है क्योंकि इनमे वह आत्मजागृति और विद्रोह की भावना नही है जो तद्विषयक आंदोलनो के

पश्चात् किसानो के एक रक्त को ऊष्ण कर चुकी थी[1] । वस्तुतः 'निराला' के किसानो मे शिक्षा का अभाव है, जिसके कारण वे अपनी सामूहिक शक्ति को नही पहचान पाते और जमीदार की बेइमानी, धांधलेबाजी और बेगारी को चुपचाप सहन कर जाते है। इन किसानो में सिधाई के साथ-साथ कायरता भी है और यदि उनका कोई हितैषी इनमें आत्म-जागृति फैलाता है, तो उसे वे ग्रहण नही कर पाते और अज्ञानवश उसके साथ विश्वासघात कर बैठते है। समय आने पर ये कायरता दिखा जाते है और उन्हे अपनी यह कायरता प्यारी लगती है। सजा के भय से वे अन्याय और अत्याचार और निर्दयतापूर्ण व्यवहार सह जाते है और जमीदार से समझौता कर लेते है। किसानो की यही कायरता उनकी शक्ति-क्षीणता का कारण है। वे अपने दुःखो को भी दूसरो से कहने मे घबराते है। सहते हुए मर जाना उन्हें स्वीकार है। अभी इन किसानो मे इतनी शक्ति

---

१. 'अलका' के किसान स्वराज के संबंध में परस्पर बातचीत तो करते हैं, किन्तु उनके वार्तालाप से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस स्वराज की वे बातें करते है, उसे प्राप्त करने के लिए जिस सक्रिय उत्साह और उद्योग की आवश्यकता है, उसका ज्ञान उन्हें नहीं है। उनके वार्तालाप के कुछ अंश यहाँ उद्धृत किये जाते हैं :

"सुराज क्या है रे ?" बुधुआ ने महँगू से पूछा।

"किसानों का राज।" गंभीर होकर महँगू ने कहा।

"तो क्यों रे महँगू !" बुधुआ ने पूछा—"फिर ये जिमींदार और पटवारी क्या करेंगे ?"

"झख मारेंगे, और क्या करेंगे ?"

बुधुआ ने डरते-डरते पलकें तिलमिलाते हुए धीरे से पूछा—"ये कहाँ जायंगे रे महँगू ?"

".....गंधी महारानी का प्रताप ऐसा है कि इनके हाथ बँध जायँगे, और बोल बंद हो जायगा। तब से किसानों के तलवे चाटेंगे।"

"तो लगान फिर किसको दिया जायगा ?"

"किसी को नहीं, लगान दिया गया, तो सुराज कैसा ?"

नही आई कि वे अपने निश्चय पर दृढ़ रह सके। "अभी किसानो मे कड़े पैर खड़े होने की हिम्मत नही हुई।"

किसानो की ग़रीबी और बेबसी का सजीव कित्रण निरुपमा' मा मे हुआ है। किसान स्त्रियो के पास तन ढाँकने को पर्याप्त वस्त्र नही है। आषाढ़ के महीने मे भी खाने को अनाज नही रहता और तिस पर उन्हे तिगुना लगान देना पड़ता है। इस ग़रीबी मे भी किसानो मे आपसी फूट, असहयोग और धार्मिक रूढ़ियाँ व्याप्त है। ग्रामीण परस्पर एक-दूसरे से लड़ते और अपना सर्वनाश करते है।

'निराला' के ऐतिहासिक उपन्यास मे भी तत्कालीन वातावरण साकार और सजीव हो उठा है। 'प्रभावती' मे मध्यकालीन सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक स्थिति सजीव हो उठी है। तत्कालीन राजनीतिक दाँव-पेच और षडयत्र, आपसी फूट और बैर तथा गृहयुद्ध का सफल चित्रण 'निराला' ने प्रस्तुत उपन्यास मे किया है। लेखक ने वर्णनात्मक शैली द्वारा उस युग से हमारा परिचय कराया है: "वह और ही युग था। एक ओर गाँव मे गरीब किसान छप्परों के नीचे, दूसरी ओर दुर्ग मे महाराज धन-धान्य और हीरे-मोतियो से भरे प्रसादो मे.....वेतन पाने न पाने वाले दरिद्र सभी देशवासी उसके सिपाही थे। राज-भक्ति के प्रदर्शन मे उन्हे लड़ना पड़ता था। उधर जरा-जरा सी बात पर लड़ाई क्षत्रियत्व की सूचना थी।.....गाँवो मे वर्णाश्रम धर्म की धाक थी। राजवश के क्षत्रियो को छोड़कर और सभी जातियो को चाहे वृद्ध की बगल से बच्चा आ निकले. यदि ब्राहमण वंश का हो, चारपाई छोड़कर उठना पड़ता था, गाँवो मे दिन भर यह कसरत जारी रहती थी।.....उस समय भारत जिस भिन्नता में था, वह साधारण जनों को आत्मा से असह्य थी; जिस तरह वनो के प्राण शून्य में प्यासी पुकार भरते हुए वारिवर्णन कराते है, उसी तरह भारत की जनता की मौन करुण-ध्वनि ने दूसरी दूसरी सत्ताओ को शासन के लिए बुलाया।.....चिरकाल से क्षत्रियो की युद्ध ज्वाला भारत को दग्ध कर रही थी। कृषि, जनपद तथा जीवन अकारण युद्ध के कारण नष्ट हो रहे थे। साधारण जनो के दृश्य बड़े करुणोत्पादक थे।"

देश-काल को सप्राण बनाने मे 'निराला' ने स्थानीय वर्णनो से सहायता ली है, जिसके कारण 'प्रभावती' मे आचलिक उपन्यास के अनेक तत्वो का समावेश हो गया है। उपन्यास का आरभ ही स्थानीय प्राकृतिक शोभा वर्णन से हुआ है : "लगभग लवणा एक छोटी बरसाती नदी है। उन्नाव के पास ऊसर से निकली, खुजरगाँव से कुछ दूर गगा मे मिली है। . . . इस समय इस प्रात की आबादी बहुत बढ़ गई है, फिर भी कही-कही लवणा के तट काफी भयावने, हिरन, भेड़िये और जगली सुअर आदि के अड्डे हो रहे है। तब, जब कान्यकुब्ज का दोपहर का प्रताप-सूर्य पूर्ण स्नेह की दृष्टि से अपनी पृथ्वी को देख रहा था, इसके तट इतर वृक्षो तथा झाड़ियो से पूर्ण, अधकार से ढँके रहते थे।"

"लवणा उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर प्रवाहित है। इसके प्राय: पाँच सौ वर्ग मील फैले दोनो ओर के हरे छोरो के भीतर भारतीय सस्कृति तथा उदार प्राचीन शिक्षा के अमृतोपम पय को धारण करने वाले कान्यकुब्ज सभ्यता के मुग़ल सरोज झलक रहे है। दाहिने-दक्षिण ओर, शुभ्र स्वच्छतोया जाह्नवी; मध्यभाग मे लवणा, अपने जीवन-प्रवाह को पूर्ण करती हुई, उत्तर-बाँई ओर मन्दगामिनी सई।" यह चित्रण बहुत लम्बा है और सपूर्ण को यहाँ उद्धृत करना सभव नही है।

कहानी कहना 'निराला' का प्रधान उद्देश्य कभी नही रहा, वरन् चरित्रो के माध्यम से अपने मन्तव्य को प्रकट करना ही उनका मुख्य ध्येय रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि 'निराला' के सामने पहले चरित्र आते थे, बाद मे कथानक[1]। फिर उन चरित्रो की मनचाही विशेषताओ को अभिव्यक्त

---

१. प्रसिद्ध उपन्यासकार और समीक्षक तुर्गनेव के मतानुसार लेखक के मस्तिष्क में पहले किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह का चित्र ही आता है। उनका कथन है : "The germ of a story, with him, was never an affair of plot—that was the last thing he thought of, it was the representation of certain persons. The first form in which a tale appeared to him was as the figure of an individual, or a collection of individuals, whom he wished to see in action, being sure that such people must do

करने के लिए ही वे किसी विशेष कथानक की रचना करते थे। इसक परिणामस्वरूप 'निराला' के चरित्र-चित्रण मे दो कमजोरियाँ स्वतः आ गई है। एक तो यह कि उनके पात्र कल्पनालोक के प्राणी बन गये है; दूसरे वे लेखक के किसी आदर्श को प्रकट करने वाले निष्प्राण जीव बन गये है। उपर्युक्त दो आक्षेप प्रायः आलोचक 'निराला' के चरित्र-चित्रण के सबध मे लगाते है। इनके अतिरिक्त 'निराला' के चरित्र-चित्रण के सबध म एक आक्षेप यह भी लगाया जाता है कि उनके पात्रो पर घटनाए नियत्रण रखती है। किन्तु वस्तु-स्थिति तो यह है कि 'निराला' ने घटनाओ की सयोजना चरित्रो को प्रकाश मे लाने के निमित्त की है। उल्लखित अन्य आक्षेपो मे भी सत्याश बहुत कम है, क्योकि 'निराला' के चरित्र नही, वरन् कथानक के कतिपय प्रसग ही अतिरजित है। इसी भाँति उनके चरित्रो मे एक विशेष प्रकार की आदर्शवादिता है, किन्तु वह ठोस धरातल की नही बन पायी है। आदर्शवादी होते हुए भी चरित्रो मे गति है सप्राणता है, स्वच्छदता है। वे अत तक स्थिर सपाट अवश्य बने रहते है, किन्तु उनके चरित्रो की स्थिरता उन्हे हास्यास्पद नही होने देती है। परिस्थितियो के भँवर मे पड़कर, बीच-बीच मे, उनमे जो उद्वेग और अस्थिरता उत्पन्न हो जाती है, वह उनके आचरण को स्वाभाविक बना देती है। उदाहरण के लिए हम उनके 'अप्सरा' के नायक राजकुमार को ले सकते है। राजकुमार गधर्व कुमारी कनक के निश्छल सौदर्य और गुणों के प्रति अतिशय अभिभूत है। किन्तु उसके सस्कारो की जड़े इतनी गहरी और मजबूत है कि उसका अन्तर्मन वेश्या-पुत्री के प्रति घृणा व्यक्त किये बिना नही रह पाता : "स्टेज पर कनक को देखकर उसकी तरफ से उसके

---

something very special and interesting. They stood before him, definite, vivid, and he wished to know, of their nature. The first thing was to make clear to himself what he did know to begin with ; and to this end he wrote out a sort of biography of each of his character. and everything they had done and that had happenend to them upto the opening of the story."**पार्शल पोरट्रेट, पृष्ठ ३१४, १८८८ (राबर्ट लिडिल : 'ए ट्रीटाइज आन द नावेल' से उद्धृत)**

दिल में अश्रद्धा, अविश्वास तथा घृणा पैदा हो गई। .....कनक का तमाम सौदर्य उसके दिल में पैदा हुए इस घृणा के भाव को प्रशमित तथा पराजित नही कर सका। .....क्रोध और घृणा मे ऊपर तक हृदय भर गया।"

इसी भाँति 'निरुपमा' मे भी चरित्र-चित्रण अत्यंत प्रभावोत्पादक हुआ है। विशेषकर निरुपमा का हृदय-आन्दोलन अत्युत्तम है। निरू कुमार की ओर आकर्षित है, किन्तु उसके सस्कार, उसके मनोभावो को बाहर प्रकट नहीं होने देते : "कुमार को चाहती है पर वह पहुँच से बाहर है। समर्थ मन बराबर पहुँच से बाहर की चीज लड़कर भी लेना चाहता है, वह मानसिक समर करती है, पर अपनी सस्कृति से आप परास्त हो जाती है। मामा, भाई आदि के प्रति हुए स्नेह और सस्कारो के मायाजाल मे बँधकर नही बह पाती। कुमार भी हर तरह उसकी पहुँच से बाहर है। अत मे पहले की तरह निश्चय बँध गया, एक साँस छोड़कर यथार्थ ही कमजोर होकर समझी—मेरे लिए यामिनी ही है, सुबह काकुमार नही।"

आत्म-विश्लेषण द्वारा तो चरित्रो का अन्तर्द्वन्द्व प्रकट हुआ ही है, स्वयं लेखक के विश्लेषण ने भी पात्रो के हृदय-आन्दोलन की अभिव्यक्ति की है। निरुपमा की द्वन्द्वात्मक मन.स्थिति का चित्रण 'निराला' ने इस भाँति किया है : "तीन-चार दिन तक निरू तूफ़ान के समय की नौका-विहारिणी की तरह कूल से बाँधी बद नाव के भीतर जैसे बैठी रही। वेग कुछ शांत होने पर, नाव की बिहार के उद्देश्य से नही, जैसे स्वास्थ्य, शरीर नियमन, दिन-चर्या आदि के विचार से, कूल ही-कूल वाहित करने लगी।"

अतएव, जहाँ भी 'निराला' ने संस्कार, वातावरण एव परिस्थिति से उद्भूत मानसिक सघर्ष का चित्रण किया है, वहाँ वे अद्भुत रूप से सफल हुये हैं। यही कारण है कि पात्रो मे कभी-कभी उन्होने चरित्रगत दुर्बलताएँ विद्यमान दिखलायी हैं। 'अलका' का विजय जब किसानो के विश्वासघात से विक्षुब्ध हो जाता है, तब अपना समाज सेवा-क्षेत्र गाँव को छोड़ कर शहर चुनता है। उसमें आत्म-बल की न्यूनता है जिसके कारण वह हताश हो जाता है। इस संदर्भ में 'निराला' के चरित्र-चित्रण की इस कमी की ओर भी संकेत कर देना असंगत न होगा कि 'निराला' कभी-कभी मानसिक-

संघर्ष दिखलाने में चूक भी गये हैं। उपर्युक्त स्थल पर ही, जब विजय गॉव से शहर मे आ बसता है, लेखक को उसका अन्तर्द्वन्द्व दिखाना अपेक्षित था, किन्तु लेखक ने उस ओर संकेत तक नही किया। इसी भाँति 'निराला' विजय के उस हृदय-आदोलन का चित्रण नही कर पाये है जब पत्नी के न मिलने पर वह समाज-सेवा मे सलग्न हो जाता है। किन मानसिक सघर्षो के कारण वह इस ओर प्रवृत्त हुआ, इस अन्तर्द्वन्द्व के प्रति लेखक मौन रहता है। वस्तुतः देश-काल चित्रण की दृष्टि से 'अलका' जितना सफल उपन्यास है, चरित्र-चित्रण की दृष्टि से वह उतना ही असफल हो गया है। हॉ, इसमे समूह की मनोवृत्ति का चित्रण उत्कृष्ट हुआ है। किसानो के भय, आतक और कायरता का अकन अद्वितीय है। 'निरूपमा' का भी ग्रामीण-महिलाओ का चरित्र-चित्रण अत्यत स्वाभाविक और सजीव है। ग्रामीण स्त्रियों की आभूषण-प्रियता, चुगली करने की आदत, धार्मिक रूढ़िवादिता जैसे लेखक ने साकार कर पाठको के सम्मुख रख दिया है। यदि यह कहें कि प्रमुख पात्रो की अपक्षा 'निराला' के गौण पात्रो का चरित्रांकन उत्कृष्ट है, तो कोई अत्युक्ति न होगी। वस्तुतः 'निराला' के साधारण पात्र अधिक सजीव और स्वाभाविक है। यही कारण है कि 'अप्सरा' के तारा और चन्दन, 'अलका' के राधा और स्नेह शकर, 'निरुपमा' की कमला और नीली तथा प्रभावती' की यमुना पाठको को जितना प्रभावित कर पाये है, उतना तथाकथित उपन्यासो के प्रमुख पात्र नही। नीली के चरित्र से यह भी उद्घाटित हो जाता है कि 'निराला' बाल-मनोविज्ञान के भी अच्छे पारखी थे। बालक मे अच्छे बुरे का और स्नेह-ईर्ष्या के भेद-भाव का कितना बोध होता है, यह नीली के चरित्र और आचरण से स्पष्ट है।

'निराला' के संबध मे कतिपय आलोचको का यह आक्षेप भी प्रसिद्ध है कि पात्रो के माध्यम से स्वय 'निराला' बोलते है, उनके आदर्श बोलते है। किन्तु यह आक्षेप भी निर्मूल नही तो यथेष्ट सीमा तक असत्य अवश्य है। यह सत्य है कि 'निराला' के प्रत्येक उपन्यास मे उनका एक मनोवांछित पात्र अवश्य रहता है जिसके माध्यम से वे अपने विचार और मन्तव्य प्रकट कर सके। 'अप्सरा' मे तारा, 'अलका' मे स्नेहशंकर, 'निरुपमा' में

'कमला और 'प्रभावती' मे यमुना ऐसे ही पात्र है। स्नेह शंकर और कमला के माध्यम से तो 'निराला' क्रमशः देश-सेवा और स्वच्छंद प्रेम की स्पष्ट व्याख्या ही करा दी है। यह व्याख्या दीर्घ अवश्य हो गई है, किन्तु अस्वाभाविक नही है। इसका कारण यह है कि 'निराला' ने तद्विषयक बातें उन्हीं के मुख से कहलायी है, जिनका स्वभाव उनके अनुकूल है। स्नेह शकर प्रेमचद के 'प्रेमाश्रम' के प्रेमशंकर की भाँति आदर्श जमीदार है। इसलिए उनके मुख से ये शब्द कि—"चाहते और क्या है, न्याय, इस दुःख से मुक्ति। इसलिए, जो लोग वास्तव मे क्षेत्र से उतर कर देश के लिए कार्य करते है, वे यदि इन किसानो की शिक्षा के लिए सोचे, हर जिले के आदमी, अपने ही जिले मे जितने हो उतने केन्द्र कर अर्थात् उतने गावो मे इन किसानो को केवल प्रारभिक शिक्षा भी दे दे तो उनके जेलवास से ज्यादा उपकार हो और यह शिक्षा की सचाई सहृदयो की यथेष्ट सख्यावृद्धिकर दे" अस्वाभाविक और आरोपित नही लगते। इसी भाँति कमल के मुख से उन्मुक्त प्रेम की व्याख्या कृत्रिम नही लगती क्योंकि वह सुशिक्षित और प्रबुद्ध नारी है।

चरित्र चित्रण शैली की दृष्टि से 'निराला' का चरित्र-चित्रण आत्म-विश्लेषणात्मक, विश्लेषणात्मक और अभिनयात्मक तीनो है। आत्म-विश्लेषणात्मक चरित्र-चित्रण अधिक मनोवैज्ञानिक और स्वाभाविक है। 'अप्सरा' मे राजकुमार का हृदय-सघर्ष उसके आत्म-विश्लेषण मे प्रस्फुटित हुआ है। जब वह कनक के प्रति पूर्णतः आकर्षित हो चुकता है तब समाचार-पत्र में समाचार पढ़ता है कि उसका मित्र चदन गिरफ़्तार हो गया। तब उसका हृदय फिर से उद्वेलित हो उठता है। "राजकुमार की सुप्त वृत्तियाँ एक ही अकुश से सतर्क हो गई। उसकी प्रतिज्ञा-घृणा की दृष्टि से उसे देख रही थी—'साहित्यिक। तुम कहाँ हो? तुम्हे केवल रस-प्रदान करने का अधिकार है, रस ग्रहण करने का नही।" उसी की प्रकृति उसका तिरस्कार करने लगी—"आज आँसुओ में अपने शृगार की की छवि देखने के लिये आए हो? कल्पना के प्रासाद-शिखर पर एक दिन एकाकी देव के रूप से तुमने पूजा की आज दूसरी को प्रेयसी के रूप से हृदय से लगाना चाहते हो? छिः-छिः संसार के सहस्त्रों पावन संगीत

तुम्हारी कल्पना से निकलने चाहिए। कारण वहाँ साहित्य की देवी—सरस्वती ने अपना अधिष्ठान किया जिनका सभी हृदयों मे सूक्ष्म रूप से वास है। आज तुम इतने सकुचित हो गये कि उस तमाम प्रसार को सीमित कर रहे हो ? श्रेष्ठ को इस प्रकार बदी करना असभव है। शीघ्र ही तुम्हें उस स्वर्गीय शक्ति से रहित होना होगा। जिस मेघ ने वर्षा की जलद-राशि वाष्प के आकार से सचित कर रखी थी आज यह एक ही हवा चिरकाल के लिये उसे तृष्णार्त भूमि के ऊपर से उड़ा देगी।"

और राजकुमार की यह मन.स्थिति उसके और कनक के बीच हुये सवाद मे प्रकट हो उठती है। हृदय की सारी ग्लानि और विद्रोह वह कनक पर चोट करके उड़ेल देता है।

चरित्रों की व्याख्या स्वयं 'निराला' की ओर से कम हुई है। प्रेमचंद की भाँति निराला ने चरित्रों के सबध मे अपना मत और निर्णय कही नहीं दिया है। इससे पाठक और लेखक के विचारो मे मत-विभिन्नता उत्पन्न होने का अवसर नही आया है। स्वाभाविक और प्रभावशाली चरित्र-चित्रण के लिये यह आवश्यक भी है। अस्तु; 'निराला' के चरित्र-चित्रण के लिये हम निष्कर्ष स्वरूप यह कह सकते है कि यद्यपि उनके चरित्राकन मे कतिपय कमियाँ हैं फिर भी वे साधारण नहीं है। उसमे यथेष्ट प्रभावोत्पादकता और स्पन्दनशीलता है। अतएव आलोचको का यह कथन अन्यायपूर्ण है कि 'निराला' का चरित्रांकन सतही और हल्का है।

'निराला' का अधिकांश देशकाल चित्रण और चरित्र-चित्रण पात्रों के कथोपकथनो के माध्यम से हुआ है। इसलिए उनके कथोपकथन अत्यंत सारगर्भित और महत्वपूर्ण हो गये है। प्रत्येक सवाद या तो तत्कालीन सामाजिक -धार्मिक, राजनीतिक स्थिति पर प्रकाश डालता है या फिर चरित्रो पर। 'अलका' मे स्वराज और देश के स्वाधीनता संबधी विचार 'निराला' ने बड़े सुन्दर ढग से कथोपकथन मे गूँथ दिये है। प० स्नेहशंकर अलका से कहते है—"...देश की स्वतत्रता एक मिश्र विषय है। वह केवल राजनीतिक प्रगति नही।..... .देश की व्यापक स्वतत्रता को सब तरह की सुपुष्टि चाहिए। जब तक सब अगो से समान पूर्णता नही होती, तब तक स्वतत्र शरीर सगठित नही हो सकता। हमारे यहाँ ऐसा

नही हो रहा है। हमारे यहाँ तो क़ानून के बल पर राजनीतिक स्वतत्रता हासिल की जा रही है। सवाद पत्रो मे क़ानून के जानकारो का विज्ञापन होता है--वे ही देश के सर्वोत्तम मनुष्य है।"

विचार-विमर्श और वाद-विवाद के स्थलो पर सवाद अत्यंत लम्बे हो गये है जिससे एक ओर कथा प्रवाह रुक जाता है, दूसरी ओर पाठक नीरसता का अनुभव करने लगता है। इससे बचाव के लिये 'निराला' ने लम्बे कथोपकथन को कई टुकडो मे करके कई जगह तोड़-तोड़ कर रखा है और उन्हे बोझिल होने से बचाने का प्रयत्न किया है।

किसानो ओर ग्रामीणो के सवाद छोटे, रोचक और उनके स्वभाव को प्रकट करने वाले है। कतिपय कथोपकथनो मे 'निराला' की विनोदप्रियता फूट पड़ी है। 'निरुपमा' का एक स्थान स्थल उदधृत करने योग्य है—युवती ने घूँघट हटाकर उसकी (निरुपमा) तरफ देखकर पूछा--"ए गूइयाँ, ब्याह के गीत तो नही सुनने की इच्छा ?"

"सुनाओ !"--मद हँसकर देखती हुई निरू बोली।

"तुम्हारा ब्याह कब हो रहा है ?"--चपला सखी ने स्वर मे दूरदर्शिता सूचित की।

"बहुत जल्द"--निरू गभीर होकर बोली।

"बड़ी उतावली होगी ?" मर्मज्ञता से देखती हुई।

"रात को नीद नही आती, तारे गिना करती हूँ, कमरे मे धन्नियाँ।" वैसी ही गंभीरता से निरू ने कहा।

बहू ने फिर प्रश्न किया--"तो इतनी बेचैना क्यो सहती हो ? ब्याह कर लिया होता।" चलते गीत के महोच्च स्वर की छाया मे रह कर पूछा।.....

ऐसा मजाक ग्रामीण नव-वधू के अनुकूल ही है। वास्तव मे 'निराला' के सवाद अत्यत व्यजनात्मक और प्रभावोत्पादक है। कथोपकथन की भाषा पात्रानुकूल है। सुशिक्षित कनक और उसकी मा सर्वेश्वरी के वार्त्तालाप की भाषा काव्यात्मक है :

"अच्छा अम्मा, किसी पत्ते पर क़ीमती—खूबसूरत पत्ते पर पड़ी

हुई ओस की बूंद अगर हवा के झोंके से जमीन पर गिर जाय, तो अच्छा, या प्रभात के सूरज से चमकती हुई उसकी किरणो से खेलकर फिर अपने मकान आकाश को चली जाय तो अच्छा ?"

दोनो अच्छे है उसके लिये। हवा के झूले का आनंद किरणों से हँसने मे नही, वैसे ही किरणो से हँसने का आनद हवा के झूले मे नही। और घर तो वह पहुँच ही जाती है गिरे या डाल पर सूख जाय।"

अँगरेज साहब से टूटी-फूटी हिन्दी और अँगरेजी मिश्रित भाषा के प्रयोग कराने से सवाद सजीव और स्वाभाविक हो गये है। "हमको अभी टक कोई पसड नही आया। हम टुमको पसड करटा है"—"टब टुम भी आओ, हिया डासिग-स्टेज कहाँ ?"—"अच्छा टुम बोलटा, टो हम नाच सकटा",—"डेक्खो, आवी हम पियानो बजाटा, फिर टुम कहेगा, टो हम नाचेगा" आदि वाक्यो से वार्तालाप सजीव ही नही, मनोरजक भी हो गया है।

'निराला' की भाषा शैली उनके पात्रो के भाव और अनुभूति का अनुगमन करती है। सस्कृत गर्भित भाषा कम है। भावो की सही अभिव्यक्ति के लिए उन्होने कभी-कभी उर्दू, फारसी तथा प्रान्तीय बोलियो के शब्दो की भी सहायता ली है। 'प्रभावती' मे प० शिव स्वरूप महाराज की भाषा और उच्चारण मे स्थानीय रग स्पष्ट है। जजमान, सरग, पराच्छित, बराभन, सरग, बस नास, जलम-जलम, सराद आदि कितने शब्द शिव-स्वरूप तथा यमुना के अल्प सवाद मे व्यवहृत हुये है।

'निराला' की भाषा प्रायः सर्वग्राह्य और सरल है। हाँ, रोमाटिक उपन्यासो मे भावानुसार काव्यात्मक भाषा मुखरित हो उठी है, और उसने 'निराला' का कवि रूप प्रकट कर दिया है। काव्यात्मक भाषा के माध्यम से 'निराला' का प्रकृति-वर्णन और रूप-वर्णन अत्यंत मनोरम और सजीव हो उठा है। 'प्रभावती' का जनपदीय चित्रण प्रकृति के माध्यम से ही हुआ है।

"प्रकृति को दृष्टि मे नया वसत फूट चुका है। वन्य वासन्ती, हरी साड़ी पहने प्रिय की अपलक प्रतीक्षा कर रही है। कोई मालिनी उसकी लतायित कवरी मे फूल खोसकर गले मे हार पहना चुकी है।"

सौदर्य-चित्रण मे तो 'निराला' की भाषा ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की

है। 'प्रभावती' का सौदर्य वर्णन तो सर्वोत्तम है—"एक दूसरी वसन्त-रश्मि उन आँखो से फूट रही है। प्राणो का प्रति पत्र उसके पति से मिल-भिन्न-भिन्न रंगो से चमकता जा रहा है। यह जिस दृष्टि की रश्मि है, उसके साकार तत्व मे केवल देह को पल्लवित करने वाला वसंत ही नही, श्रम का ताप—ग्रीष्म, मस्तक पर कुण्डलायित बँधे विपुल केशो के बादल—नीचे ललाट पर श्रम-कण—वर्षा के जल बिन्दु, मुख पर नवजीवन से स्नात शारद अमन्द द्युति, अगो मे यौवनाग का पुष्ट हेमत, व्यवहार मे रुक्ष शिशिर—धनुष तीर आदि की निष्पत्त डालो का पतझड़ सभी ऋतुओ को शोभा वर्त्तमान ह। कैसी आँखे ! सयत आयत कैसी अचल दृष्टि। समस्त विश्व के दर्प को जैसे दबाकर वश कर रही है। पृथ्वी के हरे तरगित वृक्षो की सब्ज जल राशि के भीतर यह कमला-सी खुली स्वरूपा कुमारी, अकृत, अज्ञात भी कैसे इगित से, प्रतिरक्षा आमन्त्रण दे रही है ! नयनो की मौन महिमा मे भी असख्य गहरे अर्थ दिये हुए है। बिना शब्द के, सौदर्य की कैसी कर्मबेधिनी व्याख्या है। कोमल पद, पीनोरु—दीर्घ मध्य को धारण किये, क्षीण कटि, समुन्नत विशाल वृक्ष—वर्ग को भेदकर पुष्प मासलता स्पष्ट होती हुई, लम्बित भुजाएँ, कपोत-ग्रीवा, पश्मल रहस्यमयी बड़ी बड़ी तिर्यक आँखे, चितवन बहुत दूर आकाश की ज्योत्सना की तरह किसी के तृषित हृदय चकोर के लिए उतर रही है !"[1]

शैली की दृष्टि से 'निराला' ने ऐतिहासिक शैली और कही-कही विश्लेषणात्मक शैली का उपयोग किया है। घटना और वातावरण के वर्णन और चित्रण मे 'निराला' सदैव तटस्थ रहे है और उन्होने अपनी निष्पक्ष धारणा व्यक्त की है। किन्तु चरित्र के संबध मे वे तटस्थ नहीं रह सके है। 'निराला' के रोमांटिक उपन्यासो के सिहावलोकन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि उनमे स्वच्छदता का उभरता हुआ स्वर, रंगीन कल्पना की उडान भावुक कवि का चित्रण और चल-चित्रों जैसी नाटकीयता है। इनमे विषय-वस्तु मात्र ही रोमांस का नही है, उसके

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : 'प्रभावती', पृष्ठ ११, किताब महल।

पात्र, चित्रण विधि, भाषा शैली तक में एक विचित्र प्रकार की कोमलता मृदुलता और मधुरता है, जिसके कारण एन उपन्यासो को रोमाटिक उपन्यासो की संज्ञा दी गयी है। इनके पात्र छायावादी कल्पना से अवगुठित है, भाव और भाषा छायावादी कोमलता और काव्यात्मकता से ओतप्रोत। वस्तुतः 'निराला' के रोमांटिक उपन्यासों को हृदयगम करने के लिए पाठकों का एक ऊँचाई तक उठना अपेक्षित है। उनमे व्याप्त कोमल और मृदुल भावो का रसास्वादन तभी किया जा सकता है।

अध्याय ३

'निराला' के यथार्थवादी उपन्यास

कठोर यथार्थ जब जीवन से आकर टकराता है तो व्यक्ति की कोमल भावनाएँ बिखर जाती है, उसका स्वप्न टूट जाता है। ऐसी अवस्था में यथार्थ को अपनाना उसके लिए अनिवार्य हो जाता है। अपनी तरुणावस्था मे कविता और उपन्यास के माध्यम से 'निराला' ने अपनी मृदुल भावनाओ की अभिव्यक्ति की। उनके समस्त रोमाटिक उपन्यास कल्पना-प्रसूत है। 'अलका' और 'निरूपमा' मे यथार्थ के छिटके बिन्दु कही-कही मिल जाते है, किन्तु अन्ततोगत्वा ये कृतियाँ रोमाटिक ही है। 'अलका' मे ग्रामीण जीवन और 'निरुपमा' मे मध्यवर्गीय जीवन यत्र-तत्र मुखर होने को होता है, तभी 'निराला' का कवि-हृदय उसे भी कल्पना के रग मे डुबो देता है। फलतः इन कृतियो मे हमे वास्तविकता का परिचय नही मिल पाता। किन्तु अपनी जीवनगत परिस्थितियो के कारण 'निराला' के चिन्तन मे एक ऐसा मोड आया कि वे उत्तरोत्तर यथार्थ की ओर उन्मुख होते गये। 'अप्सरा', 'अलका', 'निरुपमा' और 'प्रभावती' के बाद के उपन्यास 'कुल्लीभाट' (१९३९), 'चमेली' (१९४१), 'बिल्लेसुर बकरिहा' (१९४२), 'चोटी की पकड़' (१९४६) और 'काले कारनामे ' (१९५०) से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि शहरी जीवन से ऊबकर गॉव के आत्मीय, अकृत्रिम और नैसर्गिक जीवन मे 'निराला' की रुचि बढ़ी। सन् १९२८-१९४२ तक वे लखनऊ मे रहे और इसी काल मे उन्होने रोमाटिक उपन्यासो की रचना की। किन्तु सन् १९४३ से वे स्थायी रूप से प्रयाग मे आकर बस गये और इस बीच मे अपनी पितृभूमि गढ़कोला गॉव मे भी कुछ दिन रहे। उनके यथार्थवादी उपन्यासो मे उनकी पितृभूमि और ससुराल के स्थानीय रग गहरे उतर

कर आये है और उस वातावरण एवं अपने सम्पर्क मे आने वाले वहाँ के व्यक्तियो का उन्होने बड़ी रुचि के साथ चित्रण किया है।

इस बात मे स्वय 'निराला' की साहित्यिक विचारधारा मे भी परिवर्तन हुआ। परिस्थितियो ने उन्हे यह अनुभव कराया कि कल्पना प्रसूत कृति मे कलात्मकता भले ही हो, किन्तु यथार्थ और सत्य के सम्मुख उसका मूल्य नगण्य है। संभवतः अपने इसी अनुभव के आधार पर उन्होने अपने एक निबध मे लिखा था : "जब तक बहते प्रवाह के प्रतिकूल किसी सत्य की बुनियाद पर ठहर कर कोई उपन्यास नई-नई रचनाओ के चित्र नही दिखलाता तब तक न तो उसे साहित्यिक शक्ति ही प्राप्त होती है और न समाज को नवीन प्रवहमान जीवन; तभी रचना विशेष शक्ति तथा सौदर्य से पुष्ट होकर नवीनता का आवाहन करती है, कला भी साहित्य को नवीन ऐश्वर्य से अलकृत करती है, कलाकार कला से अधिक महत्त्व प्राप्त करता है अथवा वह कला का अधिकारी समझा जाता है, न कि किसी प्रवाह के साथ बहने वाला, केवल एक अनुसरणकारी।"[1]

'निराला' के यथार्थवादी उपन्यास उनके सघर्ष-रत जीवन का प्रतिबिम्बन करते है। अब वे निम्न-मध्यमवर्ग या केवल निम्न-वर्ग मे घुल-मिल रहे थे। अतएव, उनके यथार्थवादी उपन्यासो के पात्र रोमाटिक उपन्यासो के पात्रो की भाँति उच्च-मध्यवर्गीय न होकर निम्न-मध्यवर्गीय और निम्न-वर्गीय है। प्रणय के विषय से हटकर अब 'निराला' ने इस वर्ग की दयनीयता और करुणावस्था का अकन किया। इस अभावग्रस्त वर्ग मे उन्होने ऊँची मानवता के दर्शन किये और उसका सहानुभूतिपूर्ण एव प्रशसात्मक चित्रण किया। उनकी इन कृतियो ने हमे तद्युगीन सामाजिक सत्य से परिचित कराया।

'कुल्लीभाट', 'बिल्लेसुर बकरिहा' तथा 'चमेली' (जो अत तक अपूर्ण रहा) 'निराला' के अन्यतम उपन्यास है। 'चोटी की पकड़' और 'काले कारनामे' अपेक्षाकृत साधारण रचनाएँ है। इन कृतियो के उत्कृष्ट

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : 'प्रबंध प्रतिमा', पृष्ठ २२०–२२१ सं० १९९७, भारती भंडार, इलाहाबाद ।

न होने का कारण स्पष्ट है। १९४३ के बाद 'निराला' अर्थाभाव और उससे उत्पन्न मानसिक अस्वस्थता से ग्रस्त रहे। इस काल मे जिन लोगों ने उनसे बातचीत की है और उनके निकट सम्पर्क मे आये है, उन्हें इस बात का अनुभव है कि १९४३ के बाद से 'निराला' मे मानसिक असतुलन के चिन्ह प्रकट होने लगे थे। उनके वार्तालाप का विषय दार्शनिक और गूढ़ रहता था, किन्तु उनकी बातचीत असम्बद्ध और उखड़ी-उखड़ी रहती थी। 'चोटी की पकड़' और 'काले कारनामे' उनकी मानसिक अस्वस्थावस्था की रचनाएँ है। फलत: इन दोनो कृतियो का शिल्प बड़ा ही उखड़ा-उखड़ा और अव्यवस्थित हो गया है। इन दोनो की कथा-सामग्री तत्कालीन है, किन्तु वह अधिक गहराई से अभिव्यक्ति नही पा सकी है। 'चोटी की पकड़' मे स्वदेशी आन्दोलन तथा 'काले कारनामे' में जमीदारो, सरकारी कर्मचारियो और अधिकारी वर्ग की काली करतूतों का उद्‌घाटन किया गया है। 'चोटी की पकड' का मुख्य उद्देश्य स्वदेशी आन्दोलन तथा हिन्दू-मुस्लिम झगड़ो का अकन करना है, किन्तु वह अधिक सजीव होकर नही आया है। हाँ, इसमे तत्कालीन सामतीय स्थिति और उसकी मनोवृति अवश्य खूब उभर कर आई है।[1] इसमें पात्रो का चरित्र-चित्रण भी सफल हुआ है। इसकी मुन्ना बाँदी 'निराला' की विशिष्ट देन है। वस्तुत: वह उन बाँदियों की 'टाइप' है जो वाचाल और कूटनीति मे निपुण होती थी। अतएव, 'चोटी की पकड' फिर भी कुछ दृष्टियों से अच्छी रचना है किन्तु 'काले कारनामे' 'निराला' की निकृष्टतम रचना है। पढकर विश्वास नही होता कि 'निराला' जैसा सफल कवि और कथाकार ऐसी निरर्थक और निकृष्ट रचना लिख सकता है। इसमें चरित्र-चित्रण तो किंचित मात्र भी नही हो पाया है। कथानक बिखरा-बिखरा और सपूर्ण उपन्यास बडा अस्पष्ट-सा है। इसकी एक मात्र विशेषता यह है कि कही-कही इसमें तद्‌युगीन समाजवादी विचार-

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'चोटी की पकड़', पृष्ठ ३२–३३ १९५९, किताब महल, इलाहाबाद।

धारा का आभास मिलता है।[1]

'निराला' का 'चमेली' उपन्यास यद्यपि अपूर्ण है, किन्तु उसका जो अश सन् १९४१ 'रूपाभ' मे प्रकाशित हुआ था, उससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता कि यदि वह पूर्ण हो पाता तो निस्सदेह 'निराला' के कथा-साहित्य मे इसका विशिष्ट स्थान होता। 'निराला' की विद्रोही प्रकृति इसमे चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई है। उन्होने देखा कि निम्न-वर्ग एक लम्बे काल से उच्च वर्ग एव अधिकारी वर्ग के शोषण, अत्याचार और उच्छश्रृखल आचरण का शिकार होता रहा है, फिर भी वह सब कुछ मौन भाव से बिना किसी विद्रोह के सहता आ रहा है। किन्तु अब इसका उत्पीड़न चरम-सीमा पर पहुँच गया है, इसलिए नयी पीढ़ी में उसे सहन करने की शक्ति और धैर्य्य नही रहा; जिसके कारण प्रतिकार और विद्रोह की भावनाएँ उसमे जन्म लेने लगी है। निम्न-वर्ग की इस तद्युगीन मनोवृत्ति की विकसित होती हुई रूपरेखा 'निराला' ने 'चमेली' मे गहराई से उतारी है। पुरानी पीढी और नयी पीढ़ी का तुलनात्मक चित्र उपस्थित करने के लिए लेखक ने दोनो पीढियो के पात्रो का निर्माण किया है। पुरानी पाढ़ी का यह व्यक्ति अन्याय और शोषण का अभ्यस्त है, इसलिए वह बिना किसी मानसिक-क्लेश के सब कुछ सह लेता है, किन्तु नयी पीढ़ी के व्यक्ति के खून मे गरमी है, जोश है इसलिए उसमे प्रतिकार की भावना ही नही, प्रतिशोध लेने की पूरी-पूरी शक्ति भी है। चमेली का बाप अधिकारी वर्ग के अनाचार को जानते हुये भी, दब्बू बना रहता है और प्रतिकार की जगह क्षमा माँगता है, किन्तु नयी पीढी के जवाहर और चमेली मे शोषण एव अनाचार के प्रति क्रोधाग्नि भभक उठती है, जिसे रोकने की शक्ति किसी मे नही। वे अत्यत स्वाभिमानी और चेतना-प्रबुद्ध व्यक्ति है।

'चमेली' मे स्थानीय रग बड़े गहरे है जिसके कारण उसमें वर्णित ग्रामीण वातावरण अत्यत सजीव हो उठा है! "उतरता बैसाख। खलिहान में गेहूँ, जव, चना, सरसो-मटर और अरहर की रासे लगी हुई

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', 'काले कारनामे', पृष्ठ ८, सं० २००७, कल्याण साहित्य मंदिर, प्रयाग।

हैं। गाँव के लोग मडनी कर रहे है। कोई-कोई किसान, चमार-चमारिन की मदद से, माडी हुई रास ओसा रहे है। धीमे-धीमे पछियाव चल रहा है। शाम पाँच का वक्त। सूरज इस दुनिया से मुँह फेरने को है। एक जगह घने आम के पेड़ के नीचे, सब जगहो से ज्यादा लाक रक्खी है... सूरज डूबने को है। किरनें ठडी हो आई है। आम की डाल पर कोयल बोल उठी। उठकर चमेली ने उस तरफ देखा। कोयल न देख पड़ी। लदे आमो की कतार दिखी..." इन थोड़े ही शब्दो मे फसल कटने का दृश्य, सध्या का वातावरण और मौसम की अभिव्यक्ति कितनी सुदर हुई है, यह कहने की आवश्यकता नही है।

'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' 'निराला' के सर्वश्रेष्ठ यथार्थवादी उपन्यास है। शिल्प की दृष्टि से इन्हे हम 'पिकारेस्क' उपन्यास कह सकते है। हिन्दी साहित्य में 'कुल्ली भाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' के रचना-काल मे पिकारेस्क उपन्यास एक अपरिचित कथा-रूप था। किन्तु पाश्चात्य-साहित्य मे यह एक महत्त्वपूर्ण साहित्य-विधा के रूप में रहा है और वहाँ इसका प्रचलन भी खूब है। 'पिकारेस्क' शब्द स्पेनिश शब्द 'पिकारो' से बना है। 'पिकारो' का मूल शब्द 'पिकार्ड' है। 'पिकार्ड' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग स्पेनिश उपन्यास 'अलमानस गुजमा दि अल्फराशे' के नायक के लिए हुआ था, जिसके कृत्य धूर्त्ततापूर्ण और हँसाने वाले है।[1] कुछ विद्वानो का यह मत भी है कि 'पिकारेस्क' शब्द सीधे स्पेनिश के 'पिकारो' शब्द से बना, जिसका प्रयोग भी असयमी और धूर्त व्यक्ति के लिए किया जाता था।[2] 'पिकारेस्क' शब्द चाहे किसी शब्द से बना हो, किन्तु इतना निश्चित है कि 'पिकारेस्क' शब्द आज भी इसी अभिप्राय को प्रकट करता है। 'पिकारेस्क' उपन्यासो

---

१. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ् लिट्रेचर, जिल्द १, पृष्ठ ४२०।

२. "From the Spanish 'picaro' stands for a rogue, and is a term applied to the class of romances that deal with rogues and knaves."— 'आक्सफोर्ड कम्पेनियन टु इगलिश लिटरेचर,' पृष्ठ ६१७।

का वर्ण्य-विषय प्रायः निम्न-वर्ग का लाछित जीवन होता है। सोमरसैट माम ने स्पेन के सोलहवी और सत्रहवी शताब्दी के इस प्रकार के उपन्यासो का अध्ययन और विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाला था कि "पिकारेस्क उपन्यासो मे समाज के उच्छिष्ट पात्रो का चित्रण किया जाता है। पात्रो का मुख्य जीवनाधार होता है। ये उपन्यास प्रायः प्रथम पुरुष में तिकडम इन लिखे जाते है। इनके नायक भृत्य कोटि के होते है और जीविकार्जन के लिए इन्हे अनेक स्वामियो की सेवा करती पडती है। विविध परिस्थितियो से गुजरने के फलस्वरूप इन्हे अनेक जीवनानुभवों का अवसर प्राप्त होता है।[1]

हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र मे 'पिकारेस्क' उपन्यास-विधा नितान्त नवीन वस्तु है। निश्चय ही 'निराला' के 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' हिन्दी-साहित्य के सर्व-प्रथम 'पिकारेस्क उपन्यास' है। उपर्युक्त दोनो उपन्यासो के नायक समाज के परित्यक्त और उपेक्षित व्यक्ति है, किन्तु मानवता दोनो मे कूट-कूट कर भरी है। ऊपर से दुर्बल दीखने वाले उन पात्रो मे समाज से लोहा लेने की अद्भुत् क्षमता है। लांछित जीवन पाने पर भी ये हँसते-हँसते समस्त पीड़ा और समाज के व्यग्य-विद्रूप को झेल ले जाते है। कुल्लीभाट अल्प शिक्षित है और बिल्लेसुर निरक्षर, फिर भी दोनो आत्म-प्रबुद्ध व्यक्ति है। उनकी आत्म-चेतना सजग है और वे जीवन के प्रति अत्यत जागरूक है।

'कुल्लीभाट' मे जीवन अधिक है, चरित कम। प्रारंभ मे ही लेखक कहता है : "बहुत दिनो की इच्छा—एक जीवन-चरित लिखूँ, अभी

---

१. Picaresque novel is one in which the characters are taken from the dregs of society and in which the hero lives on his wits. It is generally written in the first person. The hero in the classic type of the kind, is a serving man who goes from master to master. This is obviously a very convenient way of taking him through a variety of adventures and showing a diversity of conditions. It is the most characteristic form of Spanish literature."—Don Fermando. Page 79.

तक पूरी नहीं हुई; चरितनायक नही मिल रहा था, ठीक जिसके चरित मे नायकत्व प्रधान हो। बहुत आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ देखा। कितने जीवन-चरित पढ़े। सब मे जीवन से चरित ज्यादा; . . . मैं तलाश में था कि ऐसा जीवन मिले, जिससे पाठक चरितार्थ हो, इसी समय कुल्ली-भाट मरे।" 'निराला' ने समाज द्वारा उपेक्षित इस पात्र मे ऐसे-ऐसे गुण ढूँढ़ निकाले है, जो अत्यन्त दुर्लभ है। लेखक के अनुसार "यद्यपि कुल्ली के गुण बहुतो मे है, पर गुण के प्रकाश से सब घबराए।" कुल्ली को समझ सकना प्रत्येक व्यक्ति के लिए सभव नही है, बिरले ही उनके जीवन का महत्त्व समझ सकते है। "उनके जीवन का महत्त्व समझे, ऐसा अब तक एक ही पुरुष ससार मे आया है, पर दुर्भाग्य से अब वह ससार मे रहा नही —गोर्की। पर गोर्की मे भी एक कमज़ोरी थी; वह जीवन की मुद्रा को जितना देखता था, खास जीवन को नही।"

कुल्ली में हमे एक प्रखर व्यक्तित्व के दर्शन होते है। समाज के व्यग्य-विद्रूप की चिन्ता न कर वे ऐसा काम करते है जिसे उनकी अन्तर-चेतना स्वीकार करे और जो समाज के लिए कल्याणकारी हो। शिक्षित और धनी व्यक्ति उतनी समाज-सेवा नही कर सकता, जितनी कुल्ली ने की। निर्धन और अल्प-शिक्षित होने पर भी कुल्ली पाठशाला खोलकर समाज मे अछूत समझे जाने वाले वर्ग के धोबी, भगी, चमार, डोम और पासियो के बच्चो को पढ़ाते है तथा उनकी अन्य प्रकार से सहायता करते है। इस कार्य मे उन्हे सरकार और 'बड़े लोगो' का सहयोग और सहायता नही मिलती, फिर भी वे अपने कर्त्तव्य से च्युत नही होते। कुल्ली के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता है दूसरे के दोषो को अपने सिर ले लेना, दूसरों के प्रति सहिष्णु होना। उनमें वह चिन्तन और विचारशीलता है जो उच्च-शिक्षित व्यक्तियो मे भी कम होती है। वे सोचते है हिन्दुस्तान की दुरवस्था का कारण यही है कि "आदमी आदमी के प्रति ज़रा भी सहनशील नही। वह अपने लिए सब कुछ चाहता है, पर दूसरों को ज़रा भी स्वतत्रता देना नही चाहता।" कुल्ली स्वयं कष्ट सह कर दूसरो को सुविधाएँ देते है और उनका उपकार करते है। समाज-सेवा के अतिरिक्त वे राजनीति में भी सक्रिय भाग लेते है। असहयोग आन्दोलन और नमक

आंदोलन उनके जीवन का ध्येय बन जाते है। राजनैतिक नेताओं की भाँति वे केवल भाषण देना और उपदेश देना नही जानते, स्वयसेवकों की भाँति घूम-घूम कर गाँवो मे काग्रेस का प्रचार करते है। कुल्ली में छल-कपट नही है। वे स्पष्टवादी है, इसीलिए उनसे सब नाराज रहते है। समाज की रूढ मान्यताएँ उनको मान्य नही है, स्वच्छद-प्रेम पर वे विश्वास करते है और इसलिए समाज की परवाह न कर वे मुसलमान स्त्री से विवाह करते है। किन्तु उनकी मान्यताएं व्यक्तिवादी होने पर भी समाज के लिए अकल्याणकारी नही है।

कुल्ली का जीवन सघर्ष का जीवन रहा। उनका सम्पूर्ण जीवन समाज ही से लोहा लेने मे लग जाता है और बाद मे जीवनान्त भी अत्यत बडा करुण हुआ है। कोई उनकी अतिम क्रिया करने को तैयार नही होता। कुल्ली का यह करुण अत उनके प्रति करुणा तो उत्पन्न करता ही है, समाज के थोथे गौरव पर भी व्यग्य भी करता है। समाज गुणी व्यक्तियो का निरादर करता है और मूर्ख स्वार्थियो को सम्मान देता है। मरने के बाद लोग उनका महत्व समझते है, उनके शव का जुलूस निकाला जाता है किन्तु कोई उनका अतिम संस्कार करने को तैयार नही होता। और लेखक स्तब्ध रह जाता है कुल्ली के जीवन का यह अन्त देखकर। लेकिन साथ ही उसे क़स्बे भर के मनुष्यो की उमडती हुई सहानुभूति से आश्चर्य भी होता है, साधारण आदमी देखते-देखते इतना असाधारण हो गया।

'कुल्लीभाट' मे केवल कुल्ली का जीवन ही नही है, उसमें एक ऐसा व्यंग्य भी प्रच्छन्न है जिसका प्रहार लोगो को झकझोर देता है। कुल्ली के समक्ष समाज मे ऊँचे समझे जाने वाले लोगो को रख लेखक ने व्यग्य किया है। कुल्ली वे काम करते है जो बड़े-बड़े नेता नही करते। नेताओं को अपने लिए नाम कमाने की परवाह रहती है, कर्त्तव्य की नही। ऐसे स्थलों पर 'निराला' गाँधी जी और जवाहर लाल नेहरू तक पर मधुर-व्यग्य करने से नही चूकते। समाज के जिस खोखलेपन की झाँकी 'निराला' ने प्रस्तुत की है उससे यह प्रतिध्वनित होता है कि यह समाज बड़ा ढोगी है। इसमे मनुष्य—मनुष्य मे भेद-भाव, ऊँच-नीच के भाव व्याप्त है। उच्च-वर्ग निम्न-वर्ग के प्रति असहिष्णु और निर्दयी है। अछूत उत्पीड़न और

उपेक्षा के शिकार है और जो इनकी सच्चों सेवा करता है समाज उन पर भी कीचड उछालता है। ये सब व्यग्य 'निराला' ने 'कुल्लीभाट' मे बड़ी कुशलता से सजो कर रख दिए है। व्यग्य के अतिरिक्त इसमे विद्रोह और क्रांति की भावनाएँ भी प्रकट हुई है।

'निराला' की विनोदी-प्रकृति के कारण 'कुल्लीभाट' अत्यत सरस और रोचक बन गया है। स्थल-स्थल पर लेखक ने परिहास के छीटे छिड़क दिए है। 'कुल्लीभाट' का आरम्भ ही हास्य के साथ हुआ है : "मुझसे कवि भगवतीचरण वर्मा कहते थे—कविवर रामनरेशत्रिपाठी जानते है, बहुत आधुनिक रिसर्च है—तुलसीदास जी गर्मी से मरे थे, यह पता नही चला गर्मी रत्नावली से मिली—कहाँ से, बाहुक की रचना के वक्त बाँह का दर्द गर्मी के कारण हुआ। कुछ हो, मै ऐतिहासिक नही; महापुरुष अकबर था—दीन इलाही चलाया—हर क़ौम की बेटी ब्याही—चेले बनाए। अपने राम के लकड़दादा के लकड़दादा के लकड़-दादा राजा बीरबल त्रिपाठी अकबर के चेले थे; अपनी बेटी खाले के बाजपेयियों के घर ब्याही; तब से बाजपेयी-वश मे भी महापुरुषत्व का असर है; यों ट्रिपल लकड़दादा का प्रभाव कुल कनवजिया कुलीनो पर पड़ा—खैर; 'महापुरुष', 'पुरुष' का बढ़ा हुआ रगा हिस्सा लेकर है, उसी तरह 'चरित' मे एक 'सत' और जुड़ गया है। साहित्यिक की निगाह मे यह साबुन का उपयोगितावाद है, अर्थात् सिर्फ साफ़ होता है, वह भी कपड़ा, रास्ता, घर या दिमाग़ नही।". . .स्पष्ट है, 'निराला' की शैली और अभिव्यक्ति मे वह मधुर हास्य है जिसने रचना को रोचक और आकर्षक बना दिया है।

'बिल्लेसुर बकरिहा' का नायक कुल्ली की भाँति ही निम्न-वर्ग का व्यक्ति है। वह निरक्षर है किन्तु मूर्ख नही। उसका व्यक्तित्व बहुत ही सुलझा हुआ और सरल है। वह जीवन के प्रति जागरूक है और जीवन की विषमताओ से हार मानकर बैठने वाला व्यक्ति नही है वरन् उनके प्रति वह सदैव सघर्षरत रहता है। बिल्लेसुर कुल्ली की भाति अद्वितीय एवं असाधारण नही है, लेखक इसके संबध में वैसी घोषणा भी नहीं करता, जैसी उसने कुल्ली के लिए की थी। किन्तु उसमें कुछ ऐसा है

जो हमे आकर्षित करता है, हमारे मन को मोह लेता है। उसकी मानव-सुलभ दुर्बलताओ मे व्यक्ति के सहज रूप की अभिव्यक्ति है। उसने जीवन को सहज रूप से अपना लिया है, वह जीने की कला जानता है। जो मिल गया उसमे उसे सतोष है, जो नही मिला उसके लिए वह व्यर्थ की चिन्ता कर अपना जीवन भार नही बना लेता। कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने सरल और सुगम जीवन को कठिन और उलझनपूर्ण बना लेते है और दूसरे व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने जीवन की दुरूहता और कटुता को भी सरल एवं सहज बना कर हल्के बने रहते है। बिल्लेसुर दूसरी कोटि के व्यक्तियों मे से है। उसके सफल जीवन का रहस्य भी यही है। उसके जीवन की परिस्थिति बडी विषम है, पग-पग पर अनेक बाधाएँ उसकी प्रगति में बाधक होने को आती हैं किन्तु वह उनके कारण कभी कुंठित नही होता। इसके विपरीत वह एक नये उत्साह, नई प्रेरणा को लेकर अपने जीवन का मार्ग निकाल लेता है। इस तरह परिस्थिति-जन्य बाधाएँ उसे कभी मोड़ नही पाती, वरन् वे स्वयं बिल्लेसुर के सम्मुख आकर नतमस्तक हो जाती हैं। बिल्लेसुर के लिए जीवन सग्राम-स्थल है, जिससे पीठ दिखाकर भाग खडा होना वह नही जानता। दु ख के काले बादल उसके ऊपर छाये रहते है किन्तु दुःख का मुँह देखते-देखते उसकी डरावनी सूरत को वह बार-बार चुनौती देता रहता है। निराश होकर बैठना बिल्लेसुर जैसे व्यक्ति के लिए असभव है। एक ओर से निराश होकर वह दूसरे काम के लिए अपने दिल मे ताक़त पैदा करता है, मन को ढाढस बँधाता है। असफलता को हानि-लाभ, जीवन-मरण की फिलासफी मे शुमार कर नये और सुखद भविष्य की ओर देखता है। परिस्थितियो के प्रति असंतोष और विक्षोभ अनुभव करना उसका स्वभाव नही है। जीने के लिए उसे व्यवसाय के अनेक मार्ग निकालने पडते है। जीविकार्जन के लिए वह परदेश गया; फिर बकरियाँ पाली, उनका दूध नही बिका तो खोआ बनाया और जब खोआ भी नहीं बिका तो घी बनाकर बेचा। अपार धीरता संयम और सहनशीलता बिल्लेसुर के चरित्र के अद्भुत् गुण हैं। इन्हीं के बल पर वह जिन्दगी के रास्ते की ठोकरें सहता चला जाता है। लोगों के व्यंग्य-बाण उसे मर्माहत और पथ से विचलित नही कर पाते। वह व्यंग्य का

जवाब बड़े तीखे पर प्रच्छन्न व्यग्य से देता है। लोग उसे बकरिहा कहकर चिढ़ाते है तो जवाब मे बिल्लेसुर बकरी के बच्चो के वही नाम रखने लगा जो गाँव वालो के नाम थे।

बिल्लेसुर के चरित्र मे केवल गुण और अच्छाइयाँ ही नही है, दुर्बलताएँ भी है। किन्तु उसकी सब कमजोरियाँ मानव-सुलभ है और परिस्थितियो के कारण से वह उन्हे अपनाता है। "गाव मे जितने आदमी थे, अपना कोई नही, जैसे दुश्मनो के गढ़ मे रहना हो, भाई भी अपने नही।" ऐसी परिस्थिति तथा वातावरण के कारण उसे जीवन मे थोड़ा छल-कपट अपनाना पड़ा। किन्तु झूठ और धोखा का प्रयोग वह दूसरो का अहित करने के लिए नही करता, वरन् अपने बचाव के लिए करता है। वह धोखेबाज लोगो को भुलावे मे रखकर उनकी कुटिलता से बचने का मार्ग निकालता है। लोग उसके सुख-चैन का अपहरण करने मे लगे रहते है फिर भी दूसरो के प्रति वह सदैव सहिष्णु बना रहता है। लेखक के शब्दो मे "बिल्लेसुर सोचते थे, क्यो एक दूसरे के लिए नही खड़ा होता। जवाब कभी कुछ नही मिला। मुमकिन, दुनिया का असली मतलब उन्होने लगाया है। फिर भी जान रहते काम करना पड़ता है, दूसरे की मदद करनी पड़ती है, सहारा लेना पड़ता है, यह सच है। इधर कोई ध्यान नही देता; यह कमज़ोरी दूर नही हो रही, कोई सूरत भी नज़र नही आ रही। हमारे सुकरात के जबान न थी, पर इसकी फ़िलासफ़ी लचर न थी, सिर्फ़ कोई सुनता न था, इसे भी भूलभुलैया से बाहर निकालने का रास्ता नही दिखा; इसलिए यह भटकता रहा।" निम्न-वर्ग का होने पर भी वह सदैव स्वाभिमानी बना रहा। निष्क्रिय जीवन मे उसकी आस्था कभी नही रही। अतएव, जीवन के प्रति बिल्लेसुर का दृष्टिकोण बड़ा स्वस्थ है।

जीवन सबधी स्वस्थ दृष्टिकोण के अतिरिक्त 'बिल्लेसुर बकारिहा' की दूसरी विशेषता उसमे सन्निहित हास्य और व्यग्य है। सम्पूर्ण रचना की शैली से हास्य छलकता है। लेखक आरभ इतने रोचक ढंग से करता है कि पहला शब्द—नामकरण—पढते ही पाठक के मन मे हास्य-रस का उद्रेक होने लगता है : " बिल्लेसुर—नाम का शुद्ध रूप बड़े पते से

मालूम हुआ—'विल्वेश्वर' है। पुरवा डिवीजन मे, जहाँ का नाम है, लोकमत 'बिल्लेसुर' शब्द की ओर है। कारण, पुरवा मे उक्त नाम के प्रतिष्ठित शिव है। अन्यत्र यह नाम न मिलेगा, इसलिए भाषा-तत्त्व की दृष्टि से गौरवपूर्ण है। 'बकरिहा' जहाँ का शब्द है, वहाँ 'बोकरिहा' कहते है। वहाँ 'बकरी' को 'बोकरी' कहते है। मैने इसका हिन्दुस्तानी रूप निकाला है। 'हा' का प्रयोग हनन के अर्थ मे नही, पालन के अर्थ मे है।

'बिल्लेसुर जाति के ब्राह्मण, 'तरी' के सुकुल है, खेमेवाले के पुत्र खैयाम की तरह किसी बकरी वाले के पुत्र बकरिहा नही। लेकिन 'तरी' के सुकुल को ससार पार करने को तरी नही मिली तब बकरी पालने का कारोबार किया। गाँव वाले उक्त पदवी से अभिहित करने लगे।

"हिन्दी भाषा साहित्य में रस का अकाल है, पर हिन्दी बोलने वालो मे नही; उनके जीवन मे रस की गंगा-जमुना बहती है; बीसवी सदी के साहित्य की धारा उनके पुराने जीवन मे मिलती है। उदाहरण के लिए अकेला बिल्लेसुर का घराना काफी है। बिल्लेसुर के चार भाई साहित्य के चारो चरण पूरे करते है।"

'बिल्लेसुर बकरिहा' मे जितनी भी घटनाएँ और प्रासगिक कथाएँ आयी है, उन सब से हास्य की सृष्टि हुई है। बिल्लेसुर के अन्य तीनों भाइयो के कृत्य भी कम हास्यास्पद नही है। अन्य भाइयो के जीवन प्रसंगों की 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे सम्मिलित करने मे लेखक का एकमात्र उद्देश्य हास्य-परिहास की सृष्टि करना है। जमादार सत्तीदीन और उसकी स्त्री, मन्नी की सास और बिल्लेसुर के वार्तालाप मे भी विनोद तथा हास्य भरा पड़ा है। बिल्लेसुर का तो एक भी कृत्य ऐसा नही है, जो पाठक के मन मे हास्य की पुलक उत्पन्न न कर सके। यहाँ तक कि रचना के समस्त पात्रों के नामकरण भी हास्यास्पद है। बिल्लेसुर आदि चारों भाइयो के नाम की व्याख्या लेखक ने बड़ी सरसता और रुचि से की है : "मुक्ताप्रसाद के चार लड़के हुए—मन्नी, ललई, बिल्लेसुर, दुलारे। नाम उन्होंने स्वयं रक्खे, पर ये शुद्ध नाम है। उनके पुकारने के नाम गुणानुसार और है। मन्नी पैदा होकर साल भर के हुए, पिता ने बच्चे

को गर्दन उठाये बैठा झपकता देखा तो 'गपुआ' कहकर पुकारना शुरू किया, आदर मे 'गप्पू'। दूसरे लड़के ललई की गोराई रोयो मे निखर आई थी, आँखे भी कञ्जलोचन, स्वभाव मे बदले-बदले, पिता ने नाम रक्खा 'भर्रा', आदर मे 'भूरू'। बिल्लेसुर के नाम मे ही गुण था; पिता 'बिलुआ', आदर मे 'बिल्लू' कहने लगे। दुलारे अपना ईश्वर के यहाँ से खतना कराकर आये थे, पिता को नामकरण मे आसानी हुई, 'कटुआ' कहकर पुकारने लगे, आदर मे कट्टू।"

हास्य और विनोद से परिपूर्ण इस रचना मे 'निराला' पूर्ण तटस्थ रहे है। हास्य व्यक्ति विशेष के प्रति न होकर परिस्थिति और चरित्राकन के ढंग मे है। बिल्लेसुर के पर्यटन का चित्रण करते हुए लेखक कहता है : "मन्त्री मार्ग दिखा गये थे, बिल्लेसुर पीछे-पीछे चले। गाँव मे सुना था, बंगाल का पैसा टिकता है, बम्बई का नही, इसलिए बगाल की तरफ देखा। पास के गाँव के कुछ लोग बर्दवान के महाराज के यहाँ थे सिपाही, अर्दली, जमादार। बिल्लेसुर ने साँस रोककर निश्चय किया, बर्दवान चलेंगे। लेकिन खर्च न था। पर प्रगतिशील को कौन रोकता है ? यद्यपि उस समय बोल्शेविज्म का कुछ ही लोगो ने नाम सुना था, बिल्लेसुर को आज भी नही मालूम, फिर भी आइडिया अपने आप बिल्लेसुर के मस्तिष्क मे आ गई। वे उसी फटे हाल कानपुर गये। बिना टिकट कटाये कलकत्ते वाली गाड़ी मे बैठ गये। इलाहाबाद पहुँचते-पहुँचते चेकर ने कान पकड़ कर गाड़ी से उतार दिया। बिल्लेसुर हिन्दुस्तान की जलवायु के अनुसार सविनय कानून-भग कर रहे थे, कुछ बोले नही, चुपचाप उतर आये; लेकिन सिद्धात नही छोड़ा।"

हास्य के साथ 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे मधुर व्यग्य भी व्याप्त है। किन्तु व्यंग्य कटु नही है। हास्य की भाँति वह व्यक्ति विशेष पर न होकर, परिस्थिति और उसके चित्रण मे है। इसके अतिरिक्त व्यंग्य निरपेक्ष नही है, वह हास्य की दृष्टि करने मे सहायक हुआ है। तत्र-मत्र, पूजा-पाठ आदि धार्मिक आडम्बरो पर लेखक ने व्यग्य तो किया ही है, उन सब से हास्य का सृजन भी हुआ है।

'बिल्लेसुर बकरिहा' के माध्यम से किसी मन्तव्य का प्रचार करना

लेखक का उद्देश्य नही है। 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे बड़े साधारण और सरल ढग से सरल व्यक्ति, सरल वर्णन, चित्रो और सरल अभिव्यक्ति द्वारा एक अत्यत स्वस्थ जीवन-दर्शन आप ही आप अभिव्यजित हुआ है। न तो लेखक इसमे किसी प्रकार का दार्शनिक विवेचन करने मे व्यस्त रहा है, न ही जीवन की तात्त्विक व्याख्या करने मे। इस प्रकार रचना मे किसी प्रकार की गूढ़ता और रहस्यात्मकता उत्पन्न कर उसने नीरसता को सामग्री प्रस्तुत नही की है। इसी कारण सम्पूर्ण रचना अत्यत सरस और मनोरजक वन गई है।

'निराला' के रोमांटिक उपन्यास और यथार्थवादी उपन्यास के शिल्प मे गहरा अतर है। उनके रोमांटिक उपन्यासो मे हमे कथानक का क्रमिक विकास मिलता है, किन्तु 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे इतिवृत्त उतना नही है, जितना चरित्र है। इसलिए कथानक के विकास का कोई प्रश्न ही नही उठता। वस्तुत. शिल्प की दृष्टि से इन दोनों उपन्यासो मे हास्य रस के रेखाचित्र के तत्त्व मिलते है। रेखाचित्र किसी इतिवृत्त और घटना पर आधारित नही होता, वह व्यक्ति पर आधारित होता है। इसमे व्यक्ति की रूप-रेखा, उसकी वेश-भूषा, चलने-फिरने के ढग, दूसरो से बातचीत करने एव व्यवहार करने के ढग आदि का चित्रण होता है। रेखाचित्र मे शैली तथा अभिव्यंजना का महत्व है जब कि कहानी मे कथा या घटना का। यही स्पष्ट हो जाता है कि 'कुल्लीभाट' एव 'बिल्लेसुर बकरिहा' शिल्प मे रेखाचित्र के अधिक निकट है। 'कुल्लीभाट' की रूपरेखा और वेशभूषा आदि का 'निराला' ने बड़ा मनोरजक चित्रण किया है—"गेट पर टिकट-कलेक्टर के पास एक आदमी खड़ा था बना-चुना, बिल्कुल लखनऊ-ठाठ, जिसे बगाली देखते ही गुडा कहेगा। तेल से जुल्फे तर, जैसे अमीनाबाद से सिर पर मालिश कराकर गया है। लखनऊ की दुपलिया टोपी, जो तेल से गीली, सिर के दाहने किनारे रक्खी। ऐठी मूंछे। दाढ़ी बनाई। चिकन का कुर्ता। ऊपर वास्कट। हाथ मे बेत। काली मखमली किनारी की कलकतिया धोती, देहाती पहलवानी फ़ैशन से पहनी हुई। पैरों मे मेरठी जूते। उम्र पच्चीस के साल दो साल इधर-उधर। देखने पर अंदाज़ा लगाना मुश्किल है—हिंदू या

मेंसलमान। सॉवला रंग। मजे का डीलडौल। साधारण निगाह मे तगड़ा और लंबा भी।"

रेखाचित्र मे चरित्र-चित्रण प्रायः अभिनयात्मक होता है किन्तु 'कुल्लीभाट' मे विश्लेषणात्मक चरित्र-चित्रण भी हुआ, जब कि 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे विशुद्ध अभिनयात्मक चरित्र-चित्रण है। 'कुल्लीभाट' मे कुल्ली के चरित्र के सबध मे लेखक का वक्तव्य इसलिए अधिक सटीक है, क्योकि कुल्ली लेखक के सम्पर्क मे आया हुआ व्यक्ति है। फलतः कुल्ली के चरित्र के सबध मे लेखक अनेक स्थलो पर अपने निर्णय दे बैठता है : "अधिक न सोच सका। मालूम दिया, जो कुछ पढ़ा है, कुछ नही; जो कुछ किया है, व्यर्थ है; जो कुछ सोचा है स्वप्न। कुल्ली धन्य है। वह मनुष्य है, इतने जबुको मे वह सिह है। वह अधिक पढ़ा-लिखा नही, लेकिन अधिक पढ़ा-लिखा कोई उससे बड़ा नही। उसने जो कुछ किया सत्य समझ कर।"

लेकिन 'बिल्लेसुर बकरिहा' मे लेखक उसके चरित्र के सबध में जो कुछ बताना चाहता है, उसे उसने बिल्लेसुर के आचरण और बातचीत से प्रकाशित किया। बिल्लेसुर बडे ही उन्मुक्त स्वभाव का, सीधा-सादा युवक है। उसका हृदय अत्यत स्वच्छ और सरल है। किन्तु अपने भोलेपन के कारण वह अपना अहित नही कर लेता। दूसरो की मनोवृत्ति समझने की उसमे अद्भुत क्षमता है और विनोदी प्रकृति का होने के कारण बात ही बात मे वह लोगो की इस मनोवृत्ति को अपने मनोरजन का साधन बना लेता है। त्रिलोचन के साथ की दोनो बार की बातचीत मे उसकी यह सूक्ष्म दृष्टि और परिहास-वृत्ति परिलक्षित हुई है।

'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' दोनो का कथा-संगठन अत्यत सफल है। इस सफलता का कारण यह है कि इन दोनों उपन्यास की कथा नायक के चारों ओर घूमती है। सम्पूर्ण कथानक नायक पर केन्द्रित है। इसलिए कथाक्रम टूटने ओर उसमे शिथिलता आने का अवसर कम मिला है। किन्तु 'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' दोनों में ही विषयान्तर कई स्थलो पर हुआ है। 'कुल्लीभाट' मे लेखक का चरित्र भी यथेष्ट विस्तार पा गया है, ऐसा स्वयं 'निराला' ने उसकी भूमिका मे

स्वीकार किया है : "प० पथवारी दीन जी भट्ट (कुल्लीभाट) मेरे मित्र थे । उनका परिचय इस पुस्तिका मे है । उनके परिचय के साथ मेरा अपना चरित भी आया है, और कदाचित् अधिक विस्तार भी पा गया है। रूढिवादियो के लिए यह दोप है, पर साहित्यिको के लिए, विशेषता मिलने पर गुण होगा।" अतएव, इसमे 'कुल्लीभाट" मे एक सौदर्य उत्पन्न हो गया है । यह सच है कि लेखक के व्यक्तिगत जीवन के सस्मरण ने कृति को अतीव रोचक और सरस बना दिया है। ससुराल, सास से बातचीत, पत्नी से प्रथम मिलन वाले सस्मरणो ने 'कुल्लीभाट' मे एक मनोरम और अद्भुत आकर्षण उत्पन्न कर दिया है । इसके अतिरिक्त लेखक कब कहाँ और किस मनोवृत्ति से कुल्ली के सम्पर्क मे आया और उससे प्रभावित हुआ, उन सब के लिए उसके व्यक्तिगत जीवन की यह पृष्ठभूमि उपयुक्त रही है ।

'बिल्लेसुर बकरिहा' मे अनावश्यक एवम कथा-सामग्री बहुत कम है। प्रारभ मे बिल्लेसुर के परिवार —चारो भाइयो—का जीवन-परिचय कुछ आलोचको की दृष्टि मे निरर्थक हो सकता है, किन्तु जैसा पहले भीकहा जा चुका है, उससे जिस हास्य की सृष्टि हुई है वह अपने मे कम आकर्षक नही है। वह अवश्य है कि बिल्लेसुर के भाइयो की जीवन-कहानी स्वय एक स्वतत्र अस्तित्व रखती है, जैसा कि 'निवेदन' मे स्वय 'निराला' ने स्वीकार किया है : "बिल्लेपुर बकरिहा' प्रगतिशील साहित्य का नमूना है।... बहिरग-चित्रण पर ही अग-चित्रण सूचित है, जो प्रगतिशील साहित्य का प्रथम चरण है। कला ऐसी है जैसी तीन छोटी-बडी कहानियाँ एक साथ जोड़ के रख दी गई है।"

प० सत्तीदीन और उसकी स्त्री वाला इतिवृत्त प्रासगिक कथा है किन्तु मूल कहानी से वह स्वतत्र नही है। वह बिल्लेसुर के जीवनानुभव का विषय है। 'पिकारेस्क' उपन्यास के विषय के सबध मे चर्चा करते हुए कहा जा चुका है कि इस प्रकार के उपन्यास का नायक अनेक स्वामियो की सेवा करने का अवसर प्राप्त करता है जिससे उसे विविध परिस्थितियों और समाज के जीवन का अनुभव प्राप्त होता है। प० सत्तीदीन और उसके

एरिवार एव पुरी के भ्रमण से बिल्लेसुर को व्यक्ति और समाज के छल-कपट, धर्माडम्बर और थोथे विश्वासो का ज्ञान प्राप्त होता है।

अतएव, 'बिल्लेसुर बकरिहा' का कथानक अत्यत सुसगठित है। उसकी कोई घटना, कोई इतिवृत्त निरर्थक नही है। इसलिए उसमे किसी प्रकार की शिथिलता नही आने पायी है। रचना दर्शन एव वाद-विवाद से बोझिल नही है, फलत. विषय की शुष्कता एवं नीरसता से भी किसी प्रकार का शैथिल्य उत्पन्न नही हुआ है। उपन्यास घटना-प्रधान न होकर चरित्र-प्रधान है। अतएव, इसमे कथानक का क्रमिक विकास नहीं हुआ है। फिर भी कथा-प्रवाह अखडित तथा सुसम्बद्ध है और उसमें विशृखलता के चिन्ह देखने मे नही आते। उपन्यास का एक ही केन्द्रीय चरित्र है—बिल्लेसुर। वही सम्पूर्ण रचना मे क्रमबद्धता बनाये रखने में सहायक हुआ है। सारा कथानक बिल्लेसुर के जीवन और कृत्यों के चारो ओर घूमता है।

'कुल्लीभाट' और 'बिल्लेसुर बकरिहा' पढ़ते समय हमे एक बात स्पष्टत: परिलक्षित होती है कि इन दोनो कृतियो के नायक के माध्यम से 'निराला' का व्यक्तित्व मुखरित हुआ है। कुल्ली और बिल्लेसुर के चरित्र जैसे 'निराला' के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते है। ऐसा प्रतीत होता है कि 'निराला' ने स्वय अपनी उन्मुक्त प्रकृति, सरल स्वभाव, निराडम्बर व्यवहार तथा सहृदयता इन दोनो पात्रो मे भर दी है। समाज और राजनीति के प्रति उनका विद्रोह भी इनके माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है।

'निराला' के यथार्थवादी उपन्यासो के कथोपकथन अत्यंत सांक्षिप्त और स्वाभाविक हैं। वे किसी वाद-विवाद और गभीर समस्या को प्रकट करने का माध्यम नहीं बने। पात्रो की व्यवहारिक बातचीत और जीवन-सबंधी साधारण विषयो के सवाद ही अधिक है। फलत: वे सरल और स्वाभाविक हो गये है। वाक्य छोटे-छोटे, अर्थपूण और सुगठित है। निरर्थक कथोपकथनो का प्राय: अभाव है। सवादो द्वारा लेखक ने पात्रो का चरित्र-प्रकाशन किया है। विशेषत: 'कुल्लीभाट' तथा 'बिल्लेसुर बकरिहा' के कथोपकथन पात्रों के चरित्र-चित्रण में सहायक हुये हैं। लेखक और कुल्ली की बातचीत, बिल्लेसुर के साथ पं० सत्तीदीन उसकी स्त्री, त्रिलोचन

तथा मन्नी की सास की बातचीत कुल्ली और बिल्लेसुर की स्वच्छद प्रकृति, विद्रोही स्वभाव स्पष्टवादिता और विनोदप्रियता आदि स्वभाव के गुणों का उद्‌घाटन करती है। 'कुल्लीभाट' मे जहाँ 'निराला' के वार्तालाप के स्थल है वहाँ सवादो मे स्वय लेखक की परिहासवृत्ति परिलक्षित हुई है :

'सासु जी ने पूछा—'अच्छा, भैया, मेरी लडकी तुम्हे कैसी सुंदरी लगती है ?' मौखिक इम्तहान मे मै बराबर पहला स्थान पाता रहा हूँ। कहा—'मैने आपकी लडकी को छूआ तो है, बातचीत भी की है। लेकिन अभी तक अच्छी तरह देखा नही, क्योकि जब मेरे देखने का समय होता था, तब दीया गुल कर दिया जाता था। दूसरे दिन दियासलाई ले तो गया, जला कर देखा भी लेकिन सलाई के जलते ही आपकी लड़की ने मुँह फेर लिया, और झोपड़े के अगल-बगल वाले लोग खामने लगे। फिर जलाकर देखने की हिम्मत न हुई।' सासु जी मुस्किराईं, और उठकर भीतर चली गई।"

'निराला' के रोमाटिक उपन्यासों और यथार्थवादी उपन्यासो की भाषा-शैली मे आश्चर्यजनक अतर है। इस वैषम्य के कारण दोनो प्रकार के उपन्यासो के लेखक एक नही मालूम देते। लेखक मे भाषा शैली की ऐसी विविधता इस बात की परिचायक है कि उसमे अभिव्यक्ति की कितनी क्षमता है और विषय एव भावानुरूप वह कितने रूप बदलती है। भाषा शैली की यह अनेकरूपता एक तो हमे रवीन्द्र बाबू मे मिलती है, दूसरी 'निराला' मे। रोमाटिक उपन्यासो के अध्ययन मे हमने देखा कि, इन उपन्यासो की भाषा काव्यात्मक एव सस्कृत-गर्भित है। किन्तु 'निराला' के रोमांटिक उपन्यासो मे हमे जन-प्रचलित अरबी फ़ारसी, अँगरेजी और लोक-भाषा के शब्दो से युक्त भाषा मिलती है। इन उपन्यासो के लेखन, काल और उससे कुछ काल पहले 'निराला' लखनऊ मे रह चुके थे, फलत: अरबी-फारसी अब्दो का उनकी भाषा में आना स्वाभाविक है। दूसरे हिन्दी वालो की उपेक्षा से 'निराला' को उन दिनो हमारी हिन्दी से अरुचि भी हो गयी थी और उन्होने प्रतिज्ञा कर ली थी कि वे हिन्दी मे नही लिखेगे।

बाद मे लोगो के अनुरोध वश उन्हे अपनी यह प्रतिज्ञा तोड़नी अवश्य पड़ी, फिर भी उन्होने अपनी कृतियो में अहिन्दी शब्दो का प्रयोग खूब किया। किन्तु उनका अहिन्दी शब्दो का प्रयोग व्यर्थ नही गया। जहाँ भी उन्होंने ऐसे शब्दो का उपयोग किया है वहाँ उनकी भाषा सशक्त और भावा-नुगामिनी बन गयी है। कथोपकथनो मे तो यह मिश्रित भाषा और भी अधिक स्वाभाविक हो गयी है क्योकि बोलचाल मे आज हम अरबी-फ़ारसी शब्दों का प्रयोग करने के अभ्यस्त हो गये है। पात्रो के वार्तालाप को स्वाभाविक और सजीव बनाने के लिए 'निराला' ने उनके धर्म, शिक्षा-दीक्षा और वातावरण के अनुरूप ही उनसे शब्द का प्रयोग कराया है। 'चोटी की पकड़' मे मुसलमान थानेदार और नसीम के सवादो मे इसीलिए स्वाभाविकता आ गयी है कि उनकी भाषा मे अरबी-फ़ारसी शब्दो का बाहुल्य है : "आज कल जमीदारो और कुछ हिन्दुओ ने सरकार के खिलाफ़ गुटबन्दी की है। जिस जमीदार से आपके तअल्लुकात है उस पर सरकार को शुभा है। इसका भेद मालूम होना चाहिए। इससे सरकार की मदद भी होगी, और कौम की खिदमत भी। सरकार की मदद इस तरह कि आपके जरिये दुश्मन का राज सरकार को मिलेगा और क़ौम की खिदमत इस तरह कि देशी का बवेला जो हिन्दुओ ने मचा रक्खा है, यह जड से उखड जायगा। मुसलमान रैय्यत को फायदे के बदले नुकसान है अगर हिन्दुओ को कामयाबी हुई। सरकार ने बगाल के दो हिस्से इस उसूल से किये है कि मुसलमान रैय्यत को तकलीफ है; मौसमी बन्दोबस्त वाली। ९९ हर सदी जमीनो पर हिन्दुओ का दखल है; यह आगे चल कर न रहेगा इससे मुसलमानो की रोटियो का सवाल हल होता है। आपके दोस्ताने के बर्ताव से दुश्मनो की की हुई शिकायत का असर जाता रहेगा, उल्टे फायदा उठाइयेगा।"

अपने पात्रो के वातावरण में पहुँचकर स्वय 'निराला' भी उसी रग में रग जाते है और उन्ही की भाषा में चित्रण तथा व्याख्या करने लगते है। 'काले कारनामे' के दो अध्याय तक उन्होने 'नजर' शीर्षक में रखे है। कही-कही तो उनका पूरा-पूरा वाक्य तक अरबी-फारसी शब्दो से निर्मित है : जैसे, "क़समीकसमा हो जाने के बाद मैंने इस्तीफ़ा दाखिल किया"

(कुल्लीभाट)। यथार्थवादी उपन्यासो मे अरबी-फ़ारसी शब्दो का इतना अधिक प्रयोग है कि प्रत्येक पृष्ठ पर दस से अधिक शब्द इस भाषा के मिल जाते है। इन शब्दो का यदि सकलन किया जाय तो सूची बड़ी लम्बी बन सकती है?

भावो की सही अभिव्यक्ति के लिए कही-कही निराला' ने लोक प्रचलित अँगरेज़ी शब्दो का भी प्रयोग किया है। ये शब्द ऐसे है जिनके लिए हिन्दी शब्दो का प्रयोग नही किया जा सकता। स्पिरिट, फैशन, एमोशन, आइडिया, ट्रस्ट, कामरेड, फिलासफो जैसे शब्दो का प्रयोग 'निराला' ने किया है, जिनके स्थान पर हिन्दी शब्द रख देने से भाषा प्रभावहीन हो जाती। भाषा को प्रभावशाली बनाने के लिए उन्होंने बोलियो और लोक-प्रचलित मुहावरों का भी यथेष्ट प्रयोग किया है। ग्रामाण पात्रो के मुख से या स्वयं लेखक के मुख से ग्रामीण पात्रों के लिए लत्ता, आग भभूका, ढाढ़स, भूत, भभूत, डीलडौल, तगड़ा शब्दो का प्रयोग अत्यत स्वाभाविक लगता है। ग्रामीण मुहावरे--घोड़े मुतवाना, गर्दन नापना, सिर उठाना, जड़े काटना, दुधारी तलवार, दूध का धोया, गाल बजाना, पीठ दिखाना, पीठ बचाना, पाँचों घी मे, ढाई चावलो की खिचडी, कलई खुलना, खाक छानना आदि के प्रयोग से भावाभिव्यक्ति सरल और सजीव हो गयी है।

अतएव, सभी दृष्टियो से 'निराला' के यथार्थवादी उपन्यासों की भाषा सरल और सुबोध है। इस सरल भाषा ने उनकी अभिव्यक्ति को गहराई, चित्रण को सजीवता और चित्रात्मकता प्रदान की है: "सूरज डूब रहा था। बिल्लेसुर की आँखो मे शाम की उदासी छा गई। दिशाएँ हवा के साथ सायसाय करने लगी। नाला बहा जा रहा था जैसे मौत का पैगाम हो। लोग खेत जोतकर धीरे-धीरे लौट रहे थे, जैसे घर की दाढ़ के नीचे दबकर, पिसकर मरने के लिए। चिडियाँ चहक रही थी अपने-अपने घोसले की डाल पर बैठी हुई, रो-रोकर साफ कह रही थीं, रात को घोसले मे जगली बिल्ले से हमे कौन बचायेगा? हवा चलती हुई इशारे से कह रही थी, अब कुछ इसी तरह बह जाता है।"

अंत मे यदि हम 'निराला' के रोमांटिक उपन्यासों तथा यथार्थवादी

उपन्यासों की तुलना करे तो हम पाते है कि इन दोनों मे महान अतर है। पहले का एक मात्र उद्देश्य प्रेम-स्वातन्त्र्य की स्थापना है तो दूसरे का एक स्वस्थ जीवन दर्शन। रोमांटिक उपन्यासो की विषय-सामग्री मात्र प्रणय संबंधी है, यथार्थवादी उपन्यासो मे उसका उल्लेख तो है, किन्तु वह उनका केन्द्रीय विषय नही है। रोमांटिक उपन्यासो के पात्रो की भाँति यथार्थवादी उपन्यासो के पात्र कल्पना लोक मे विचरण करने वाले जीव नही है, यथार्थ को अपनाने वाले प्राणी हैं। दोनों की चित्रण-शैली एवं भाषा मे भी अपार अन्तर है। पहले मे काव्यात्मक भाषा छलछलाती है, दूसरे मे ठोस यथार्थ का अकन है।

अध्याय ४

'निराला' की कहानियाँ

'निराला' का कहानी-साहित्य उनके उपन्यास-साहित्य की भाँति ही समृद्ध है। उनकी कहानियो के वर्ण्य-विषय और शिल्प मे मौलिकता है जिससे वे गरिमामय हो गयी है। 'निराला' की समस्त कहानियाँ हमे तीन सग्रहो मे प्राप्त है। वे क्रमशः निम्नलिखित है : 'लिली' (१९३०), 'चतुरी चमार' (१९३४) और 'सुकुल की बीबी' (१९४१)। 'लिली' मे आठ, 'चतुरी चमार' मे भी आठ और 'सुकुल की बीबी' मे चार कहानियाँ सग्रहीत है। निराला' की एक कहानी 'नई कहानियाँ' पत्रिका के दीपावली विशेषाक (१९६१) मे 'दो दाने' नाम से, उनके मृत्यूपरान्त प्रकाशित हुई थी।[1] इस प्रकार 'निराला' की समस्त कहानियो की सख्या इक्कीस है। 'निराला' का एक और कहानी सग्रह 'सखी' नाम से, गगा-पुस्तक माला, लखनऊ द्वारा प्रकाशित हुआ था। किन्तु यह कोई स्वतत्र सग्रह नही है, जैसा कि प्रायः समीक्षक कहते है कि 'निराला' के चार कहानी सग्रह है। वस्तुतः 'चतुरी चमार' नामक कहानी सग्रह की कहानियाँ ही 'सखी' के नाम से प्रकाशित है। अतएव 'निराला' की कहानियो और उनके संग्रहो की सख्या वही है, जैसा पहले कहा जा चुका है।

उपन्यासो की भाँति 'निराला' की कहानियों को भी हम, विषय की दृष्टि से, रोमांटिक तथा यथार्थवादी, दो प्रकारों मे विभक्त कर सकते है। प्रथम कहानी-सग्रह 'लिली' की लगभग समस्त कहानियाँ रोमाटिक है और बाद के संग्रह 'चतुरी चमार' तथा 'सुकुल की बीबी' की कहानियाँ यथार्थवादी। किन्तु इन दोनो प्रकार की कहानियो के शिल्प मे वैसा अतर

---

१. यह कहानी श्री ब्रह्मदत्त विद्यार्थी द्वारा संपादित 'भूखा बंगाल' नामक कहानी-संग्रह में सोलह-सत्रह वर्ष पहिले छप चुकी थी।

नही है जैसा उनके रोमांटिक और यथार्थवादी उपन्यासो के शिल्प में हैं। अतएव, 'निराला' की कहानियो का अध्ययन हम एक ही अध्याय के अन्तर्गत करेगे ।

'निराला' ने कभी निरुद्देश्य कहानी--रचना नही की । उनकी प्रत्येक कहानी मे कुछ न कुछ उद्देश्य निहित है। किसी मे समाज-प्रचलित रूढ़ि-ग्रस्त मान्यताओ पर प्रहार है, किसी मे वैयक्तिक भावनाओ का आलोड़न-विलोडन है, किसी मे वर्ग-विशेष के प्रति सवेदना है। वस्तुत: 'निराला' की कहानियाँ उनके विचार और भावनाओ का परिणाम है । उनकी प्रत्येक कहानी मे हमे विचारोत्तेजना की सामग्री मिलती है। उनके प्रथम कहानी सग्रह 'लिली' की अधिकांश कहानियो मे हमे तत्कालीन नवोदित तरुण-समाज की व्यक्तिवाद मे परिपूर्ण स्वच्छद प्रकृति प्रस्फुटित मिलती है। एक ओर उसमे सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक रूढ़ियो तथा शृखलाओ को छिन्न-भिन्न करने का उत्साह है और दूसरी ओर उन्मुक्त वातावरण तथा स्वच्छद प्रेम के पोषण की उत्कट आकांक्षा । उसमे आत्माभिव्यक्ति और आत्म-विकास की आकुलता ही नही, उसकी अद्भुत क्षमता भी है। 'पद्मा और लिली' के नायक नायिका अपने प्रणय का उद्घाटन, समाज के सम्मुख , बिना किसी हिचक और हीनता की भावना के करते है। नायिका पद्मा तो अपने मा-बाप के सम्मुख प्रेम और प्यार की व्याख्या तक करती है। माता-पिता की धार्मिक रूढियों और अंधविश्वासो के फलस्वरूप नायक नायिका वैवाहिक सुख शांति को तिलांजलि दे देते हैं, किन्तु अपने प्रेम की बलि नही देते। आजीवन अविवाहित रह कर वे अपने पवित्र प्रेम की रक्षा करते है। पद्मा समाज से अपने पिता वाली दुर्बलता निकालने के लिए बालिकाओ को अपने ढग से स्वतत्र आत्म-प्रकाशन और आत्म-विकास की शिक्षा देती है। यही उसका अपने पिता से, या प्रकारान्तर से समाज से प्रतिशोध लेने का एक मात्र मार्ग है। अत:'निराला' ने अपने पात्रो में उन्मुक्त प्रेम को निभा सकने का अर्थ बल दिया है। इस विषय मे एक बात दृष्टव्य है कि'निराला'के नायको की अपेक्षा नायिकाएँ स्वच्छद प्रणय का पोषण करने की अधिक क्षमता रखनी है। 'ज्योतिर्मयी', 'सुकुल की बीबी' 'श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी' तथा 'क्या देखा' के नायक

जहाँ इस क्षेत्र मे प्रवेश करने से हिचकिचाते है, वहाँ इनकी नायिकाएँ उनका हाथ पकड़ कर उन्हें आगे ठेलती है। ज्योतिर्मयी विधवा होने पर भी स्वयं को स्वच्छद प्रेम करने की अधिकारिणी समझती है। 'सुकुल की बीबी' की कुँवर विवाहित और विजातीय पुरुष से प्रेम करती है और बाद मे साहस के साथ उससे विवाह करती है। सुपर्णा श्रीमती गजानद शास्त्रिणी यद्यपि प्रेम मे असफल रहती ह् किन्तु उनकी विफलता का उत्तरदायित्व उस पर नही, नायक मोहन पर है। सुपर्णा मोहन से कहती है कि "तुम मुझे कही ले चलो। मै तुमसे कहने आई हूँ। दूसरे से ब्याह करना मै नही चाहती।" किन्तु मोहन लोक-लाज के कारण सुपर्णा को नही अपना पाता। फलस्वरूप वह् एक अधेड वैद्य प० गजानन्द शास्त्री से ब्याह दीजाती है। इस घटना के पश्चात् सुपर्णा मे विद्रोह और प्रतिकार की भावनाएँ जागृत होती है। "बाग से लौटने पर सुपर्णा के हृदय मे मोहन के लिए क्रोध पैदा हुआ...उसने भी विरोध किये बिना विवाह के बहाव मे अपने को बहा दिया. मन मे यह प्रतिहिंसा लिए हुए कि मोहन इस बहते मे मिलेगा। और उसे हो सकेगा तो उचित शिक्षा देगी।" फिर मोहन से उसका हाड हाड़ जलने लगता है। मोहन को जलाने के लिए वह पातिव्रत पर लेख लिखती है और छायावाद के विरोध में लिख कर मोहन की कविताओ पर कुठाराघात करने का प्रयास करती है। वस्तुतः प्रस्तुत कहानी 'निराला' की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक सूझ की परिचायक है। उत्कट प्रणय किस भाँति तीव्र घृणा और प्रतिहिंसा में परिणत हो जाता है, यह इस कहानी की मूल ध्वनि है। यदि आधुनिक मनोविज्ञान के प्रकाश मे सुपर्णा के मनोविज्ञान का विश्लेषण करे, तो हम पायेगे कि सुपर्णा अपनी अन्तर्चेतना में मोहन से अटूट प्यार करती है, किन्तु चेतन मे उसके मन मे विरोधी भावो का प्रकाशन होता है। प्रत्यक्ष मे उसका नारीत्व अपमान की ज्वाला से जलकर अपने प्रेमी को जलाकर क्षार-क्षार कर देना चाहता है। वस्तुतः सुपर्णा का अन्तर्द्वन्द्व और उस अन्तर्द्वन्द्व का विश्लेषण स्वयं पात्र के आचरण और जीवन की गतिविधियो द्वारा—बिना लेखक की अपनी व्याख्या के—इतना सुन्दर बन पड़ा है कि कहानी का सारा सौदर्य-केन्द्र उसी मे सिमट गया है। 'निराला' की यह कहानी आलोचको की दृष्टि

से उपेक्षित रही है, किन्तु मनोविज्ञान की दृष्टि से वस्तुतः यह कहानी 'निराला' की सर्वश्रेष्ट कहानी कही जा सकती है।

'निराला' की लगभग समस्त कहानियो मे हमे विद्रोही और क्रांतिकारी विचारो के पोषक पात्र मिलते है। 'ज्योतिर्मयी' की नायिका ज्योतिर्मयी और सहनायक वीरेन्द्र समाज के बधनों को तोड़ने का सक्रिय उद्योग करते है। इस कहानी का नायक विजय भी समाज भीरु और दुर्बल-चरित्र युवक है। विधवा ज्योतिर्मयी की ओर आकर्षित होने पर उसमें इतना साहस नही है कि वह एक विधवा से विवाह कर सके। उसे विधवा-विवाह करते हुए लाज लगती है। किन्तु उसका मित्र वीरेन्द्र उससे भिन्न प्रकृति का है। वह 'दुर्बल समाज की सरिता से बहते हुए निष्पाप पुष्प' को मौखिक सहारा ही नही, आर्थिक सहायता देकर भी उसका उद्धार करता है। अपने मैनेजर को ज्योतिर्मयी का पिता घोषित कर और बीस हजार रुपये व्यय कर वह विजय से उसका विवाह करा देता है।

'निराला' के कथा-साहित्य मे वीरेद्र जैसे 'सिह पुरुष' की प्रचुरता है जो समाज की रूढियों की अवहेलना कर स्वतत्र मार्ग अपनाते है। 'श्यामा' का नायक बकिम "रूढियो पर चलती हुई लोगो की भीतरी प्रकृति से तद्रूप घृणा" करता है. क्योकि उसे लगता है कि यह "जीवन जैसे मशीन के चाको की तरह दूसरे तथ्य से चल रहा हो, स्वय लौह-खड की तरह निर्जीव, निस्पद। इसलिए वहाँ उसका हृदय नही मिलता, सभी के लिए हृदय से वह विदेशी बन गया है।" लोगो के व्यग्य-वाण सहकर भी वह दरिद्र लोध किसान सुधुआ की सहायता करता है और असहाय श्यामा से विवाह करता है। उसके सम्मुख ऊच, नीच, गरीब-अमीर का भेद-भाव नही है। वह एक जाति-विशेष ब्राह्मण न होकर मनुष्य है, जो दूसरो की विपत्तियो मे सहायता करना अपना धर्म समझता है। उसे सामाजिक सम्मान और पैतृक सम्पत्ति की परवाह नही है। ग़रीबों पर अत्याचार और अन्याय करने वाले शोषको से बकिम को तीव्र घृणा है। सबल बनकर वह इनसे पूरा प्रतिकार लेता है।

'निराला' की समस्त यथार्थवादी कहानियो की मूल समस्या शोषक और शोषितों की है और सभी कहानियो मे शोषकों के प्रति 'निराला'

ने प्रतिहिंसा व्यक्त की है और शोषितों के प्रति अपार सहानुभूति और करुणा। "प्रकृति की दृष्टि में अमीर और गरीब वाला क्षुद्र भेद भाव नहीं .....वह स्वय कभी छोटे और बड़े का निर्णय नही करती, उसकी दृष्टि मे सभी बराबर है, क्योकि सभी उसी के है।" अमीर और गरीब के स्तर-भेद तो समाज ने बना दिये है। 'हिरनी' सुदर है। सुशील, किन्तु वह अनाथ और निर्धन है इसलिए उसका शोषण अमीर लोग खूब करते है फिर भी वह सब कुछ सहन करती चली जाती है। किन्तु इस उत्पीडन का प्रतिकार प्रकृति ले लेती है और रानी साहिबा को कभी न ठीक होने वाली बीमारी धर दबाती है। सामती वर्ग सबसे भयकर शोषक है। उसके सस्कार मे शोषण जड़ जमाये है, क्योकि युग-युग से वह ऐसा करता आया है। 'राजा साहब को ठेंगा दिखाया' ऐसे शोषको का जीता-जागता उदाहरण है। गरीबों का खून चूस-चूस कर यह वर्ग अपने ऐश्वर्य की सामग्री एकत्र करता है। एक ओर इस शोषक-वर्ग का ऐश्वर्य और वैभव है[1] और दूसरी ओर दलित-वर्ग है जिसके पास खाने को कुछ नही है, भूखो मरता है। वह राज्य की विशालाक्षी देवी का पूजक है। तीन रुपया महीना

---

१. "स्वच्छ, क़ीमती, चौड़ी किनारी वाली, बारीक, ठोस-बुनी, बंगला-ढंग से कोंछीदार शान्तिपुरी धोती, रेशमी शर्ट और सुनहरे स्लीपर पहने चश्मा लगाये राजा साहब नाव की सैर के लिए चले। रास्ते में तीन ड्योढ़ियाँ पड़ती हैं, हौदा-कसे हाथियों के निकलने के लिए आधी और ऊँची, रास्ते के दोनों तरफ़ बड़े-बड़े तालाब; साफ़-सुथरे दूब जमाये पार्क; दोनों बगल बटम—पाम की क़तारें; दूर के देशी बगीचे से बेला, जूही और कमलों की खुशबू आती हुई। पहली ड्योढ़ी पर बैठे हुए राजा साहब के मुसाहब उनके आने पर क़तार बाँधकर भक्तिपूर्वक, प्रणाम करके उद्दंड प्रसन्नता के साथ गये। अर्दली, सिपाही, खानसामें प्रासाद के साथ आये थे। पहली, दूसरी और तीसरी ड्योढ़ी के सिपाही क्रमशः किर्च निकाल-निकालकर, राजा साहब को बाएँ रख कर दाहिने हाथ से सलामी देते गये।"—सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'राजा साहब को ठेंगा दिखाया', (चतुरी चमार) पृष्ठ ३४–३५, किताब महल, इलाहाबाद।

और रोज पूजा के लिए तीन पाव चावल और चार केले पाता है। घर मे पाँच आदमी खाने वाले हैं। बड़े दुःख के दिन होते हैं। कुछ और काम वह, उसकी पत्नी और बेटी तीनो अलग-अलग कर लेते है। फिर भी पेट भर को न होता है। इस पर जब वह तनख्वाह की दरख्वास्तें देता है तो सुनवाई नही होती, उल्टे मारपीट कर उसकी नौकरी भी छीन ली जाती है। यह है भारत के इस दीन-हीन वर्ग की दशा।

समाज दलितों पर निदर्यी प्रहार करता है, किन्तु 'निराला' ने इन्हें महिमान्वित कर अपनी कहानियो मे बड़ा ऊँचा स्थान दिया है। इन गरीबो मे ऐसे दिव्यगुण विद्यमान है, जो अत्यन्त दुर्लभ है। इसीलिए समाज विहित पगली को निराला ने 'देवी' की संज्ञा दी। इस पगली को देख कर लेखक अपने पर, प्रकारान्तर से साहित्यकारों पर व्यग करता हुआ सोचता है : "मेरी बड़प्पन वाली भावना को इस स्त्री के भाव ने पूरा-पूरा परास्त कर दिया। मै बड़ा हो जाऊँ, मगर इस स्त्री के लिए कोई उम्मीद नहीं। इसकी किस्मत पलट नही सकती। ज्योतिष का सुख-दुःख-चक्र इसके जीवन में अचल हो गया है। सहते-सहते अब दुःख का अस्तित्व इसके पास न होगा।.....लोग नेपोलियन की वीरता की प्रशंसा करते हैं। पर यह कितनी बड़ी शक्ति है, कोई नही सोचता। सब इसे पगली कहते है, पर इसके इस परिवर्तन के क्या वही लोग कारण नही ?" अतएव इस 'देवी' तुल्य स्त्री को पगली बनाने का उत्तरदायित्व है समाज के अत्याचार और अनाचार पर। समाज गरीबो का ही शोषण करता है। होटल का मैनेजर नौकर के रुपए लेकर भाग जाता है। राजनीतिक नेता, समाज सुधारक, धर्म के ठेकेदार, शिक्षित-समुदाय सभी दलितों के प्रति अनुदार है। समाजसेवा और धर्म के नाम पर शोषण बढ़ रहा है। 'देवी' एक प्रतीकात्मक कहानी है। लोग देवी तुल्य इस स्त्री को पगली और गूंगी समझते हैं, किन्तु पगली लोगों के 'पागलपन' और 'गूंगेपन' पर हँसती है। पूरी कहानी व्यग-विद्रूप से पूर्ण है। वर्तमान समाज-व्यवस्था पर लेखक ने तीखा व्यग किया है।

'निराला' के दलित पात्रों की सब से बड़ी विशेषता है, शोषण के प्रति असंतोष और उत्पीड़कों के प्रति विद्रोह। पगली गूंगी है, फिर भी वह

अपना असंतोष भाव-मुद्राओं द्वारा अभिव्यक्त करती है। 'चतुरी चमार' में यह विद्रोह और भी अधिक उभर कर आया है। चतुरी उपेक्षित और निम्नवर्गीय होते हुए भी चेतनाप्रबुद्ध है। लेखक तो चाहता है कि वह उसके लिए 'गौरवे बहुवचनम्' लिखे। चतुरी आत्मगौरव और आत्म जाग्रति से परिपूर्ण है। उसमे साधारण बुद्धि से ऊपर की बुद्धि है। चमारो का प्रतीक होने पर भी वह अपनी निजी विशेषताए रखता है। वह कबीर, तुलसी, सूर, पलटूदास आदि भक्त कवियो के पदो का ज्ञाता और गायक है। उसका अहं व्यर्थ की डीग हाँकने वाला नही है, प्रत्युत उसमे सच्चाई है। जब वह कहता है "काका, ये निर्गुण-पद बड़े-बडे विद्वान नही समझते" तो एक बार लेखक को लगता है कि चतुरी अभिमानी है। किन्तु बाद मे जब चतुरी उन अलकारिक पदो का अर्थ समझाता है तब वह समझ पाता है कि इन अशिक्षितो का ज्ञान-भडार कितना गहरा है। चतुरी मे अपनी नई पीढी को विद्या देने की उत्कट अभिलाषा है। अपने अधिकारो के प्रति भी वह कम सचेत नही है। चतुरी अभिमानी है, पर उदण्ड नही है। जब उसे अपने अस्तित्व का ज्ञान हो जाता है, तब उसमे असाधारण क्षमता आ जाती है। फिर वह दास-भावना को मिटाने की यथाशक्ति कोशिश करता है। गाँव वालों का सहयोग उसे अधिक नही मिल पाता फिर भी वह सघर्ष मे कभी नही पिछड़ता। गाँव के किसान-आँदोलन का नेतृत्व करता है और अन्याय से मुक्त होकर ही दम लेता है। उसकी हार में भी जीत की प्रसन्नता और संतोष है, क्योकि उसने यह जान लिया है कि "जूता और पुर वाली बात अब्दुल अर्ज में दर्ज नही है।"

केवल सामंती वर्ग शोषण और अत्याचार मे संलग्न नही है, मध्यम वर्ग, जो एक प्रकार से स्वय शोषित है, दूसरो का शोषण करता है। 'निराला' की 'सफलता' कहानी की कथा प्रकाशक के लेखक के शोषण की है। 'निराला' स्वय इस प्रकार के शोषण के भोक्ता थे, इसलिए इस कहानी में अनुभूति की गहराई और प्रतिकार की भावना है। एक प्रकाशक लेखक नरेन्द्र से उसके कृतित्व का 'मोल-भाव' करता है जिसका उत्तर नरेन्द्र देता है : "आप लोग पुस्तकें बेचने के विचार से ५० और ६० प्रतिशत कमीशन बेचने वाले को देते हैं—यह आपकी साहित्य-सेवा नहीं, अर्थ-

सेवा हुई। यदि लेखकों को अधिक देने लगे, तो किताबें अच्छी-अच्छी लिखी जायँ और साहित्य का उद्धार भी हो।" किन्तु प्रकाशको पर नरेन्द्र के इस कथन का कोई प्रभाव नही पड़ता। बाद मे समर्थ होने पर, नरेन्द्र इसी प्रकाशक से अपना प्रतिकार लेता है।

'निराला' को 'दो दाने' कहानी भी समाज के शोषण और अनाचार को प्रकाश मे लाती है। उदर-पूर्ति के निमित्त, 'दो दाने' के लिए मनुष्य कैसे-कैसे कुकर्म करने को बाध्य है, यह इस कहानी का सार है। बंगाल-दुर्भिक्ष के समय "गाँव के बाजार के बाजार खाली हो गये है। न पैसा है, न अन्न। पहले लोग उपास करने लगे। दिन मे एक वक्त फिर दो दिन मे एक वक्त, बाद में यह भी मोहाल हो गया। पेडो की कोपले उबाल कर खाने लगे। कुछ दिनो मे ही हरा-भरा बगाल डूँडा हो गया। आदमी और ढोरो के पेट मे पेड़ो के पत्ते चले गए। भूख की ज्वाला बढ़ती गई। देहात मे भीख न मिलने की वजह वे लोग शहर के रास्ते दौड़े। कोई आधी दूर चलकर, मरे, कोई पहुँचकर, मगर पेट मे दाना न गया। धनिक जन हथियारबन्द सिपाहियो से अपने गोलो की रक्षा कराने लगे।" ऐसे समय मे यदि पेट की ज्वाला से व्याकुल होकर कमला जैसी माँ जिसे अपने बच्चो को जिन्दा रखना है, किशोरी बेटी चम्पा को रूप के बाजार मे बैठा दे, तो कोई आश्चर्य नही ! यह तो उसका हृदय ही जानता है कि इसके लिए उसे कितनी पीड़ा सहनी पड़ती है। स्वय लेखक के शब्दो मे : "कमला का हाल बयान से परे था। हृदय के टुकड़े-टुकड़े हो रहे थे। पुरानी मर्यादा का बाँध टूट रहा था। दु:ख के आँसू उमड़कर सारा घर डुबा देना चाहते थे। बच्चे सहम न जाए, चम्पा घबरा न जाए कि आता हुआ दाना तूफ़ान और बाढ़ मे जैसे उड़ जाए और बह जाए। वह पत्थर से दिल को बाँधे रही।" और चम्पा ? अबोध बालिका—वह कुमारी जिसकी माँग मे सिंदूर न था "आज उसके विवाह की जैसे पहली रात है, दो प्रिय है। हृदय मे कम्प है, लेकिन पुलक नही, आत्मा मे कर्त्तव्यनिष्ठा है, लेकिन स्त्री-भाव वाला, सम्प्रदान नही।" ऐसे मे स्वार्थी तथा कामुक लोगों की बन आती है।

सीधे-सादे सरल व्यक्ति का इस पूँजीवादी युग की विषमताओ मे

जीना अत्यंत दुष्कर है। 'अर्थ' कहानी एक ऐसे ही सरल निष्कलुष युवक की कहानी है। ईश्वर पर अटूट श्रद्धा और भक्ति रखने वाला रामकुमार वर्तमान युग की आर्थिक विकृतियो से निस्पृह है। किन्तु उसकी आस्था और भक्ति उसकी आर्थिक समस्या नही सुलझा सकती, क्योकि अब युग बदल गया है। "वह क्या जाने कि ससार किसे कहते है, एक साधारण सी जगह के लिए कितने असाधारण कार्य करने पड़ते है, कितना छल, कितनी खुशामद, कितनी सिफारिश दो रोटियो की नौकरी के लिये आज जरूरी हो रही है ? उसके राम इस संसार के स्वामी हो सकते हैं, पर बर्ताव में इस संसार के स्वामी उसके राम नही है।" ऐसे ससार में रामकुमार के हृदय की पवित्रता किसी काम नही आती। अनुभव ही उसे बाद में सिखाता है कि "ईश्वर ही अर्थ है, वह जिस भक्त पर कृपा करते है, उसमें सूक्ष्म अर्थ बनकर रहते है, जिससे वह स्थूल अर्थ पैदा करता रहता है। इस कहानी में उठाई समस्या का समाधान वास्तविक है, यद्यपि इसका इतिवृत काल्पनिक है।

ईश्वर पर पूर्ण विश्वास और श्रद्धा प्रजा की भी समस्या नही सुलझा सकती। इस प्रकार 'निराला' जी की समस्त कहानियो का मूल स्वर क्राति और विद्रोह का वाहक है। इसीलिए उनकी कहानियो मे व्यग बडा तीखा हो गया है। 'स्वामी सारदानन्द जी महाराज और मैं' मे 'निराला' ने साधु-सत और तंत्र-मत्र को खिल्ली उड़ाई है। रूढि-ग्रस्त पुरानी मान्यताए 'निराला' को अमान्य है। उनका कथन है कि रूढ़ियाँ और पुराने विचार आज के युग की समस्याओ का समाधान नही कर सकते। इसलिए इनमे परिवर्तन आवश्यक है। हमे समाज की सड़ी-गली मान्यताओं की अवमानना करनी होगी, उसकी शृखलाओ को तोड़ना होगा, समाज को ठुकराना पड़ेगा तभी विकास संभव है। 'सफलता' का नायक अपनी प्रेमिका से कहता है : "...आज से दुनिया को ठोकर मार दो---इसे जो जितनी ठोकरे लगा सका, इसकी आँखों में वह उतना ही बड़ा हुआ---उतना ही इसने उसके पैर पकड़े" समाज से लड़ने के लिए आत्मविश्वास और आत्म बल चाहिए। फिर समाज के लोग "कुत्तो की तरह भौकेगे पर कुछ कर नहीं सकते। सामने आकर काटना देशी कुत्ते जानते नही। 'निराला' को

प्रत्येक कहानी हमें आत्मशक्ति और अदम्य उत्साह प्रदान करती है।

ऊपर विवेचित कहानियो के अतिरिक्त 'निराला' की अवशिष्ट कहानियों सखी-सहेलियों की विशुद्ध मित्रता ('सखी'), आधुनिक उच्छृंखल युवकों की छिछली प्रेम-मनोवृत्ति ('प्रेमिका-परिचय'), प्रतिशोध ('परिवर्तन') तथा उच्च मानवीय गुणो ('कला की रूपरेखा') आदि विषयो को लेकर लिखी गई है। इनमे 'कला की रूपरेखा' सर्वोत्कृष्ट कहानी है। 'निराला' के मित्र पाठक कला की रूपरेखा जानना चाहते हैं तो 'निराला' उत्तर देते है कि कला कुछ नही है। क्योकि "जो अनंत है, वह गिना नही जा सकता।.....कला उसी तरह की सृष्टि है, जैसे आप सामने देखते है, बल्कि यही सृष्टि लिखने की कला की जमीन है। अनादि काल से अब तक सृष्टि को गिनने की कोशिश जारी है, पर अभी तक यह गिनी नही जा सकी, अधिकांश मे बाकी है। यह एक-एक सृष्टि एक-एक कला है। फलतः कला क्या है, यह बतलाना कठिन है। अद्वैतवाद मे सृष्टि के गिनने की असमर्थता के कारण, सृष्टि का अस्तित्व ही उड़ा दिया गया है। इसलिए कहा, कला कुछ नही है। कला के दो-चार, दो-चार सौ, दो-चार हजार, दो-चार लाख, दो-चार करोड रूप भी बतलाये जा सकते हैं। पर इससे कला पूरी-पूरी न बतलाई गई। पर एक बोध है, उसका स्पष्टीकरण किया जा सकता है, जैसे ब्रह्म के अलग-अलग रूपों की बात नहीं कही गई, केवल 'सच्चिदानन्द' कह दिया गया है। इसी को साहित्यिकों ने 'सत्य' 'शिव' और 'सुंदर' कहकर अपनाया है। बोध वह है, जैसी कला हो, उसके विकास क्रम का वैसा ज्ञान। इसके लिए प्राचीन और नवीन परम्परा भी सहायक है और स्वजातीय और विजातीय ज्ञान के साथ मौलिक अनुभूति और प्रतिमा भी।" और बाद मे एक व्यक्ति को देख 'निराला' को कला का जीवित रूप जैसे मिल जाता है। 'निराला' के कृतित्व की सबसे बडी विशेषता यही है कि उन्होने उपेक्षितों में उच्च माननीय गुणों की विभूतियाँ देखी है।

'निराला' के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य के पर्यवेक्षण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि उनकी समस्त कहानियाँ सामाजिक है। प्रसंगवश उनमें राजनीति, धर्म, दर्शन आदि की भी चर्चा मिलती है। यदि स्थूल दृष्टि से

देखें तो उनकी अधिकांश कहानियों में विधवा, अछूतों, वेश्याओं के उद्धार और तरुण वर्ग के असंयमित एवं अनियंत्रित मनोवृत्तियों का अंकन है। इस प्रकार तद्युगीन समाज की लगभग सभी महत्वपूर्ण समस्याओं को 'निराला' ने अपनी कहानियो का वर्ण्य-विषय बनाया है। कही उन्होने इन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है कही नही। समाधान विद्यमान हो या न हो, किन्तु इतना अवश्य है कि 'निराला' की प्रत्येक कहानी विचारोत्तेजक है। समाज और धर्म की रूढ़ियों, शोषण और स्वतत्र विकास को अविरुद्ध करने वाली परपराओ का 'निराला' ने स्पष्ट विरोध किया है। इन सब की 'निराला' को स्वय गहन अनुभूति थी, इसलिए उनका चित्रण बड़ा मर्मस्पर्शी और प्रभावशाली बन गया है।

कहानी की वस्तु-योजना कथानक के विविध अगो के सुसंगठन पर निर्भर करती है। कथानक के विविध अग है—कहानी का आरभ, विकास, चरमसीमा, अत तथा शीर्षक। 'निराला' की कहानियो के शिल्प-सौंदर्य के सबध मे आरभ मे ही यह कह देना अच्छा होगा कि उनकी कहानियाँ किसी पूर्ण योजना का परिणाम नही है। उनके सम्पर्क मे, उनके मर्म को छूने वाला कोई पात्र या घटना आती थी, तो उसके प्रति अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए वे उसे कहानी या उपन्यास के माध्यम से चित्रित कर देते थे। इसलिए उनकी कहानियो मे आरभ, विकास, चरमसीमा और अत की निश्चित स्थितियाँ खोजना उचित नही है। वैसे यदि हम कहानी के इन विविध अगो की परिपुष्टता 'निराला' की कहानियो मे खोजना ही चाहे तो हमे निराशा नही होगी। 'निराला' की कहानियो का आरभ बड़ा आकर्षक और रुचि पैदा करने वाला है। रोमास पूर्ण कहानियो का आरभ प्राय: नायिका के रूप-यौवन चित्रण से हुआ है—यथा, 'पद्मा और लिली' 'कमला' तथा 'सफलता' मे। 'निराला' के सौदय-वर्णन अत्यत सजीव और आकर्षक है। उनके द्वारा प्रारभ में ही पाठक कहानी के रोमानी वातावरण के छायालोक से अवगुंठित हो जाता है।

'सफलता' का आरंभ उद्धृत करने योग्य है : 'जो हवा दिए के जलते रहने की वजह है, वह दिए को बुझा भी देती है। आभा से सस्नेह अकलुष

प्राणों के पावन प्रदीप को पति के जिस निश्चल समीर ने साल भर तक जलः रक्खा था, वह साल भर से उसे बुझाकर, उसकी पृथ्वी से दूर, अन्तरिक्ष की ओर तिरोहित हो गई है। साल भर ही में सुहाग का काजल उस दीपक-प्रकाश के अपर, रत्नार आँखों मे प्रिय-दर्शन के अंजन-रूप नही रह गया। आभा आज की शरद् की तरह अपनी सारी रगीनियों को धोकर शुभ्र हो रही है—श्वेत शेफाली सी रगे प्रभात के रिश्मि-पात मात्र से वृतच्युत—जैसे केवल देवार्चन के लिए चुनी हुई। पर, प्राणो के नीचे, डठल मे, जो रंग लाया हुआ है, वह तो शरद् का नही—बसत का है। उसी के ऊपर बसत के बाद वाले महीनो के ये दल जैसे शरद को आभा से शुभ्र हो रहे है। लालसा-चपल क्या कोई उस पूर्ण विकसित स्खलित शेफालिका-राशि को केसरिए सुगध रंग से अपनी बसत की पाग रगने के लिये वृक्ष के नीचे से चुपचाप चुन ले जायगा? हाय, यह वह सत्य शेफालिका तो नही! यह तो केवल देव-चरणो पर चढ़ने के लिए है—माला होकर हृदय पर या रग बनकर आँखो पर चढ़ने के लिये नही! तभी आभा गाँव के किनारे धुले धवल शिवालय मे देवता-पदो पर प्रत्यह पुष्प-स्वरूप अर्पित होने के लिये जाती है। उसके भीतर हृदय का दीप तो गुल हो चुका है, पर बाहर अध मदिर-हृदय का दीप वह जला आती है।

कुछ रोमांसपूर्ण कहानियों का आरंभ नायक नायिका के भावपूर्ण वार्तालाप से हुआ है। इन कहानियो मे भी पाठको को रोमास की तीव्र अनुभूति होती है। 'ज्योतिर्मयी' तथा 'परिवर्तन' ऐसी ही कहानियाँ है। 'निराला' की एकाध कहानी का आरभ घटना से भी हुआ है। 'हिरनी' इसका उदाहरण है: "कृष्णा की बाढ़ बढ़ चुकी है, सुतीक्ष्ण, रक्त-लिप्त, अदृश्य दाँतो का लाल-जिह्व, योजनो तक, क्रूर, भीषण मुख फैला कर, प्राण-सुरा पीती हुई मृत्यु ताडव कर रही है। सहस्रो गृह-शून्य, क्षुधा-क्लिष्ट, निःस्व, जीवित ककाल साक्षात् प्रेतो से इधर-उधर घूम रहे है। आर्तनाद, चीत्कार, करुणानुरोधो मे सेनापति अकाल की पुनः-पुनः शख-ध्वनि हो रही है। इसी समय सजीव शांति की प्रतिमा सी एक निर्वास बालिका शून्यमना दो शवों के बीच खड़ी हुई चिदंबर को देख पड़ी।"

जिन कहानियों मे 'निराला' ने आरंभ ऐतिहासिक शैली से किया है, उनका आरभ कुछ कम आकर्षक हो गया है। 'श्यामा', 'अर्थ', 'प्रेमिका-परिचय' 'श्रीमती गजानद शास्त्रिणी' 'सखी' तथा 'भक्त और भगवान' के आरंभ मे इसी लिए शैथिल्य आ गया है। वातावरण प्रधान कहानियों का आरंभ अधिक सजीव और मनोहर है क्योकि उनमें सौदर्य-प्रेमी और प्रकृति चित्रण मे निपुण 'निराला' का कौशल प्रकट हुआ है। 'न्याय' कहानो का आरंभ प्रतिचित्रण से हुआ है : "अभी ऊषा की रेशमी लाल साडी प्रत्यक्ष हो रही है—भास्कर-मुख अपर प्रान्त की ओर है, केवल केशों की साधन व्योम-नीलिमा इधर से स्पष्ट। मुख का मृदु स्पर्श प्रकाश, लघुतम तूलि जैसे, पर दिगन्तशोभ से उतर कर तद्रा से अलस जीवो को जगा रहा है। खिली अमलतास की हिमांगी शाखाए तरुणी-बालिकाओ-सी स्वागत के लिए सजकर खड़ी है। पवन पुनः-पुनः ऊषा का दर्शन शुभ-मधुर सन्देश दे रहा है। निविड़-नीड़ाश्रय से विहग प्रभाती गा रहे है।"

यथार्थवादी कहानियाँ, जिनके कथानक और पात्र 'निराला' के सम्पर्क मे आये हुए है, मे आरभ लेखक की रोचक जीवन-घटनाओ से हुआ है। 'सुकुल की बीवी' का आरभ तो अत्यधिक रोचक है। यहाँ उसके कुछ अश उद्धृत किये जाते है : "बहुत दिनों की बात है। तब मै लगातार साहित्य-समुद्र-मथन कर रहा था। पर निकल रहा था केवल गरल। पान करने वाले अकेले महादेव बाबू ('मतवाला'—संपादक)—शीघ्र रत्न और रभा के निकलने की आशा से अविराम मुझे मथते जाने की सलाह दे रहे थे। यद्यपि विष की ज्वाला महादेव बाबू की अपेक्षा मुझे ही अधिक जला रही थी, फिर भी मुझे एक आश्वासन था कि महादेव बाबू को मेरी शक्ति पर मुझ से भी अधिक विश्वास है।".....

"इसी समय दरबान से मेरा नाम लेकर किसी ने कहा—"है?"

मैंने जैसे वीणा-झकार सुनी। सारी देह पुलकित हो गई, जैसे प्रसन्न होकर पीयूषवर्षी कठ से साक्षात, कविता-कुमारी ने पुकारा हो, बड़े अपनान से मेरा नाम लेकर। एक साथ कालिदास, शेक्सपीयर, बंकिम-चन्द्र और रवीन्द्रनाथ की नायिकाए दृष्टि के सामने उतर आईं। आप

ही आप एक निश्चय बँध गया—यह वही हैं, जिन्हें कल कार्नवालिस स्क्वायर पर देखा था—टल नही रही थीं। मुझे देखकर पलके झुका ली थीं। कैसी आँखें वे !—उनमें कितनी बातें !—मेरे दिल के साफ़ आइने मे उनकी सच्ची तस्वीर उतर आई थी, और मैं भी वायु-वेग से उनकी बगल से निकलता हुआ, उन्हे समझा आया था कि मै एक अत्यत सुशील, सभ्य, शिक्षित और सच्चरित्र युवक हूँ। .....कविता से प्रेम होगा। मेरे छंद की स्वच्छदता कुछ आई होगी इनकी समझ मे, तभी बाकी समझने के लिए आई है।"

उठकर जाना अपमानजनक जान पड़ा। वही से दरबान को ले आने की आज्ञा दी।

अपना नंगा बदन याद आया। ढकता, कोई कपड़ा न था। कल्पना में सजने के तरह-तरह के सूट याद आए। पर वास्तव मे दो मैले कुर्ते थे। बड़ा गुस्सा लगा प्रकाशको पर। कहा, नीच है, लेखको की कद्र नही करते। उठकर मुंशी जी के कमरे मे गया और उनकी रेशमी चादर उठा लाया। कायदे से गले मे डालकर देखा फबती है या नही। जीने से आहट नही मिल रही थी, देर तक कान लगाए बैठा रहा। बालों की याद आई—उकस न गए हों। जल्द-जल्द आइना उठाया। एक बार मुँह देखा, कई बार आँखे सामने रेल-रेल कर। फिर शीशा बिस्तरे के नीचे दबा दिया। शॉ की 'गेटिंग मैरेड' सामने करके रख दी। डिक्शनरी की सहायता से पढ़ रहा था, डिक्सनरी किताबों के अन्दर छिपा दी। फिर तनकर गम्भीर मुद्रा से बैठा।"

इस कहानी के प्रारंभ का यह विनोद, परिहास और चुलबुलापन पाठकों को ऐसा आकर्षित करता है कि वह पूरी कहानी पढ़कर ही दम लेता है। इसी भाँति 'देवी', 'स्वामी सारदानन्द जी महाराज और मैं'। 'कला की रूप-रेखा' और 'क्या देखा' कहानी के प्रारभिक अंशों मे लेखक की आत्मकथा और आत्म जीवनगत प्रसंगो से बड़े सरसज्ञता और रोचकता उत्पन्न हो गई है। इनसे हमे इस महान लेखक की रुचियों, आदतों और जीवन की गति-विधियों का परिज्ञान होता है।

'निराला' की कहानियो का विकास क्षिप्रगति से हुआ है और उसमें

पर्याप्त कुतूहल तथा उत्सुकता बनी रहती है। कहानी को प्रवाहयुक्त बनाने के लिए 'निराला' ने अनेक स्थलो पर नाटकीय संयोगो (Consi-dences) से काम लिया है। 'ज्योतिर्मयी' के कथा-विकास मे तो नाटकीयता भी आ गई है। विजय का मित्र वीरेन्द्र प्रच्छन्न रहकर आकस्मिक संयोगो की सृष्टि करता है। वह धोखे से ज्योतिर्मयी का विवाह विजय से करा देता है। कहानी के अंतिम भाग मे धीरे-धीरे विकसित होने वाले कथानक का भेद खुलता है और तब पाठको की जिज्ञासा तृप्त होती है। 'कमला', 'श्यामा', 'प्रेमिका-परिचय', 'परिवर्तन', 'सखी', 'न्याय', 'सफलता', 'कला की रूपरेखा' और 'क्या देखा' के कथानकों का विकास भी कुतूहल और जिज्ञासा के सम्मिश्रण से हुआ है। 'कमला' के संयोग तो आकस्मिक परिवर्तनों की सृष्टि कर कथा-प्रवाह को एकदम दूसरी ओर मोड़ देते है। कहानी के प्रथम भाग मे नवविवाहिता किशोरी कमला पति के प्यार के मीठे-मीठे स्वप्न देखती है किन्तु सयोगवश कमला का पति उसके चरित्र पर शका कर, बिना विदा कराये, उसे छोड़ कर चला जाता है। यहाँ कमला के जीवन म दूसरा मोड़ आता है। आकस्मिक आघात से कमला की माँ प्राण छोड़ देती है और कमला निस्सहाय हो, अपने छोटे भाई को लेकर मौसी के पास कानपुर चली जाती है। अब भी उसकी पति-भक्ति क्षीण नही होती। एकाएक फिर एक घटना घटती है और हिन्दू मुसलमान के झगड़े मे उसके पति की बहन और दूसरी ब्याही पत्नी गुंडो में जाकर फँस जाती है, किन्तु कमला का भाई राजकिशोर उनकी रक्षा करता है। ये महिलाए समाज-बहिष्कृत हो जाती है। कुमारी कन्या का विवाह कही नही होता। अत मे कमला अपने भाई से अपनी ननद का विवाह कर उसे भाभी रूप मे ग्रहण कर लेती है। इस प्रकार सम्पूर्ण कहानी आकस्मिक घटनाओ और संयोगो से पूर्ण है। किन्तु सयोग और नाटकीय प्रसगो से परिपूर्ण इस कहानी में 'निराला' ने चरित्रो के मनोवैज्ञानिक विकास की अवहेलना नही की। वस्तुतः घटना और चरित्र के सुंदर सामजस्य द्वारा ही कहानी का सफल विकास हुआ है। कमला के नारीत्व और पत्नीत्व की गरिमा

ने कहानी में सजीवता उत्पन्न कर दी है। कमला का उज्ज्वल चरित्र संयोगो की अयथार्थता को संभाल लेता है।

'श्यामा' के सयोग अधिक स्वाभाविक है और उनसे कथानक का क्रमिक विकास हुआ है न कि आकस्मिक। श्यामा का बकिम से मिलना, उसका श्यामा के पिता के शोषण के प्रतिशोध मे साथ देना, फिर उसको पत्नी रूप मे ग्रहण, उच्च पद प्राप्त करने के बाद शोषको से प्रतिकार लेना—सभी संयोगो के कारण है, किन्तु उन सब का एक क्रमबद्ध विकास हुआ है। 'प्रेमिका-परिचय', 'परिवर्तन, 'सखी', 'न्याय' और 'सफलता' के संयोगो मे भी अधिक नाटकोयता और अयथार्थता नही है। 'कला की रूप-रेखा' एव 'क्या देखा' की घटनाएं और सयोग यथेष्ट कुतूहलपूर्ण और चमत्कारयुक्त है। 'कला की रूप-रेखा' मे लेखक को सयोगवश एक ऐसा व्यक्ति मिल जाता है जो कला संबधी उसके विचारों का 'जीवित रूप' है। कई घटनाओ द्वारा लेखक को उस व्यक्ति के चरित्र मे मानवीय गुणो की विभूतियाँ बिखरी मिल जाती है। 'क्या देखा' कहानी तो सबसे अधिक जिज्ञासा और चमत्कारपूर्ण है। कही-कही कहानी मे जासूसी कहानी का-सा आभास मिलता है। कहानी मे उत्सुकता बहुत अधिक है। किन्तु इसका विकास क्रमिक गति से नही हो पाया है जिसके कारण कथानक उलझा-सा प्रतीत होने लगता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'निराला' की अधिकांश कहानियो का विकास घटना और सयोगो द्वारा हुआ है। किन्तु इसी के आधार पर हम 'निराला' की कहानियो को घटना-प्रधान नही कह सकते। वस्तुतः 'निराला' की कहानियाँ चरित्र-प्रधान ही है ऊपर से देखने मे वे अवश्य घटना-प्रधान प्रतीत होती है। प्रत्येक कहानी मे चरित्रोद्‌घाटन करना 'निराला' का प्रथम उद्देश्य रहा है और चरित्र को प्रकाश मे लाने के निमित्त ही उन्होने नाटकीय प्रसंगो की सयोजना की है। 'ज्योतिर्मयी', 'कमला', 'श्यामा', 'सखी', 'क्या देखा', और 'श्रीमती गजानद शास्त्रिणी' में आधुनिक और विद्रोहिणी नारी के चरित्र के विविध पक्षों को प्रकाश मे लाने के लिए ही सयोगों का अवलम्बन ग्रहण किया है। इन संयोगों और घटनाओं का चरित्र से अलग कोई स्वतंत्र अस्तित्व और महत्व नहीं

है। संयोग एवं घटनाओं के चक्र मे पड़ कर पात्रो के चरित्र का विकास हुआ है। अस्तु, 'निराला' की कहानियों को घटना-प्रधान समझने का भ्रम नही करना चाहिए। वस्तुतः वे चरित्र-प्रधान है।

'निराला' को विशुद्ध यथार्थवादी कहानियो मे सयोग और घटनाओ के सहयोग की आवश्यकता नही पड़ी। अपने जीवन मे आने वाले व्यक्तियो की कथा ही 'निराला' ने इसलिए लिखी, क्योकि उनसे वे अमित प्रभावित हुए। 'चतुरी चमार' 'देवी' और 'सुकुल की बीबी' ऐसे ही व्यक्तियों की कहानी प्रस्तुत करती है। इन कहानियो के नायक और नायिकाओं के चरित्र द्वारा कहानी का विकास हुआ है। चतुरी की चारित्रिक विशेषताओ का लेखक को ज्यो-ज्यो ज्ञान होता जाता है। त्यो-त्यों उसके चरित्र का विकास होता जाता है। सर्वप्रथम चतुरी के अदुभुत ज्ञान का परिचय लेखक को आश्चर्यचकित कर देता है। फिर जब लेखक उसे आत्म-चेता और किसान-आंदोलन के कर्मठ योद्धा के रूप मे देखता है, तो चतुरी का पूरा व्यक्तित्व उसके सम्मुख आ जाता है। इस प्रकार कहानी का विकास चतुरी की चारित्रिक विशेषताओ के उद्घाटन से होता है।

'देवी' कहानी मे विकास-प्रक्रिया तीव्र नही है, क्योकि उसमे लेखक एक पात्र के रूप मे नही आया जैसे 'चतुरी चमार' मे आया है, वरन् एक दर्शक के रूप मे आया है। इसलिए वह चरित्र के विश्लेषण मे लग गया है। दिन-प्रति-दिन वह पगली को देख-देख कर उसके सबध में कुछ-न-कुछ खोज कर लेता है। इस कहानी मे कथानक नगण्य है, इसलिए इसके विकास मे क्षिप्रता अस्वाभाविक नही लगती। 'सुकुल की बीबी' के कथानक मे अधिक गतिशीलता है, क्योकि उसमे कथा और चरित्र दोनो है। सुकुल की बीबी स्वयं एक चरित्र है और उसका जीवन एक कथा। अपनी आत्म कहानी भी वह बड़े नाटकीय ढंग मे उतार-चढ़ाव के साथ, सुनाती है।

इस प्रकार, 'निराला' की कहानियो मे विकास की प्रक्रिया परिपुष्ट है। उनकी कहानियो का विकास वही स्थगित हो जाता है, जहाँ उसकी चरम-सीमा आ जाती है। 'निराला' की कहानियो की चरम-सीमा वही आती है, जब कहानी मे व्याप्त कुतूहल और जिज्ञासा की तुष्टि और

परिसमाप्ति हो जाती है। और फिर वहीं कहानी का अंत हो जाता है। 'पद्मा और लिली' की चरमसीमा वहाँ आती है, जब वह आजीवन कुमारी रहने की प्रतिज्ञा कर लेती है। 'ज्योतिर्मयी' की चरमसीमा में बड़ी कलात्मकता है। "प्रणय से विजय का चित्र चपल हो उठा। अब तक जिस अदेखे मुख पर असख्यों कल्पनाए उसने की है, उसे देखने को यह कितना शुभ, सुंदर अवसर मिला, उसने पिता को, ससुर को, समाज को भरे आनद के छलकते हृदय से बार-बार धन्यवाद दिया। साथ ही युवती बहू का घूँघट उठा चद्रमुख को देखने की चकोर-लालसा प्रबल हो उठी। डाकगाड़ी पूरी रफ्तार से जा रही है।

विजय उठकर बहू के पास चलकर बैठा। सर्वांग काँप उठा। घूँघट हटाने के लिये हाथ उठाया। कलाई काँपने लगी। उस कपन मे कितना आनंद है। रोए-रोएं के भीतर से आनंद की गगा बह चली।

विजय ने बहू का घूँघट उठाया, त्रस्त होकर चीख उठा--"ऐ! --तुम हो?"

"विवाह का यही सुख है!" ज्योतिर्मयी की आँखो से घृणा मध्यान्ह की ज्वाला की तरह निकल रही थी।" .....

सम्पूर्ण कहानी का विकास जिज्ञासा और कुतूहलपूर्ण है और उसकी तुष्टि के साथ चरमसीमा के बाद कहानी का अत हो जाता है। विजय के आश्चर्यचकित होने के साथ पाठक भी विस्मय-विमुग्ध हो उठते है।

'कमला' और 'श्यामा', का विकास अधिक तीव्रता से नही हुआ, किन्तु जैसे ही चरमसीमा आने को होती है उसकी गति मे क्षिप्रता आ जाती है। पाठको को जिज्ञासा होती है कि पति-उपेक्षित कमला अपने पति की बहन का अपने भाई के साथ विवाह-प्रस्ताव स्वीकार करेगी या नही। यही इस कहानी की चरम सीमा है और कमला का इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना उसकी परिसमाप्ति है। चरमसीमा के तत्काल बाद कहानी का अंत हो जाता है। 'श्यामा' की चरमसीमा-स्थल— जमीदार से प्रतिरोध लेने के बाद कहानी का अंत हुआ है। 'प्रेमिका-परिचय' मे रहस्योद्घाटन के पश्चात् अत हो जाता है। इसका अंत भी बड़ा कुतूहलपूर्ण और आश्चर्यचकित कर देने वाला है। 'परिवर्तन' और

'हिरनी' की चरमसीमा अप्रत्याशित ढंग से आती है। विवाह-मडप मे लड़के के पिता वही शत्रुहनसिह निकलते है, जिनके साथ राजा महेश्वर सिह ने नीच बर्ताव किया था। 'हिरनी' मे रानी साहिबा 'हिरनी' को मारने उठती है कि एकाएक स्वय बीमारी का शिकार हो जाती है। इस प्रकार इन दोनो कहानियो मे क्रमशः प्रतिशोध और शोषण के फल के पश्चात् कहानी का अत होता है।

'सखी', 'न्याय', 'सफलता', 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी' और 'क्या देखा' की चरम-सीमाए बड़े उपर्युक्त स्थल पर आती है। 'सखी' मे एक सखी अपनी सखी के स्नेह और मित्रता के प्रतिदान मे उसका विवाह करा कर करती है। 'न्याय' मे फँसा हुआ युवक अपनी युवती, मित्र की चतुरता से छूट जाता है। 'सफलता' मे नायक समाज में अप्रत्याशित प्राप्त सम्मान अभिव्यक्ति कर शोषको से प्रतिकार लेता है,। इन्ही स्थलो पर उपर्युक्त कहानियो की चरमसीमा और उसके उपरान्त उनका अत है। 'क्या देखा' कहानी की चरमसीमा अत्यंत कुतूहलपूर्ण और चमत्कारपूर्ण है। हीरा के पत्र से नायक के सामने रहस्योद्घाटन होता है कि अमरसिह और हीरा कौन थे। इस रहस्योद्घाटन के उपरान्त ही कहानी का अंत हो जाता है।

'निराला' की यथार्थवादी कहानियो मे ऊपर विवेचित कहानियों से भिन्न प्रकार की चरम-सीमाएँ है। इन कहानियो के कुतूहल मे चमत्कार और नाटकीयता नही है, इसलिए इनकी चरमसीमाओ मे भी इनका सम्मिश्रण नही हुआ है। इनमे चरम सीमा की स्थिति हम यहाँ मान सकते है, जहाँ लेखक कहानियो के पात्रो की अद्भुत् चारित्रिक विशेषताओ और क्षमता से परिचित होकर श्रद्धाविनत, होता है। 'चतुरी चमार', 'देवी', 'सुकुल की बीबी' और 'कला की रूपरेखा' इसी ढग की कहानियाँ है। चतुरी का चरित्र बल, दृढ़ आत्म विश्वास और आत्म चेतना उसे सामाजिक और राजनीतिक सघर्षों से जूझने का अदम्य सघर्षो से जूझ का अदम्य साहस देते है जिसके कारण वह हारकर भी जीत की खुशी अनुभव करता है। 'देवी' में पगली की मृत्यु और शोपक वर्ग के प्रतीक मैनेजर का नौकर के रुपए लेकर भाग जाना, शोषण की चरमसीमा

है। यहीं होटल के नौकर सगम के यह कहने पर कि "बाबू, आपका चेक भुनाकर मैनेजर साहब भग गये है।" लेखक व्यंग करता हुआ कहानी का अंत करता है कि "नही संगम" , मैने समझाया "मैनेजर साहब बड़े अच्छे आदमी है। घर रुपये लेने गये है। उन्हे कई सौ रुपए देने है—लकड़ी, घी, आटा, दूध, और किराए के। लौटकर रुपए देगे।" संगम वैसा ही फिर हँसा।

'निराला' की कहानियों के शीर्षक, पात्रो के नाम, भाव या घटनाओं के आधार पर हैं। नायिका-प्रधान कहानियो के शीर्षक प्रायः उनके नाम पर है, यथा—'पद्मा और लिली,' 'ज्योतिर्मयी', 'कमला', 'श्यामा', 'हिरनी' 'श्रीमती गजानद शास्त्रिणी', और 'सुकुल की बीबी'। भाव के अनुसार इन कहानियो के शीर्षक है—'अर्थ', 'प्रेमिका-परिचय, 'कला की रूपरेखा, 'क्या देखा', न्याय', 'देवी', 'सफलता' आदि। कुछ कहानियो के शीर्षक घटना के आधार पर भी है—'राजा साहब को ठेंगा दिखाया' और 'परिवर्तन'। अतः अधिकाश कहानियो के शीर्षक छोटे और कहानी की मूल सवेदना के सूचक है। कतिपय कहानियो के शीर्षक अवश्य दीर्घ हो गए है। कहानियाँ लम्बी और छोटी दोनों प्रकार की है। उनके आकार की कोई निश्चित परिधि नही है। विषय और आवश्यकतानुसार वे थोडी बड़ी हो गई है। अतः, सामान्यतः 'निराला' की कहानियाँ सगठित और परिपुष्ट है। उनमें एक ही केन्द्रीय विचार, घटना और कार्य की प्रधानता है, इसलिए किसी प्रकार की विशृखलता नही आने पाई है। वृहद् कहानी-लेखन मे भी 'निराला' की रुचि नही है, क्योकि कथा का विस्तृत तन्तुजाल उन्होने निर्मित नहीं किया है।

'निराला' की कहानियों मे कतिपय त्रुटियाँ भो दृष्टिगत होती है। उनकी यथार्थवादी कहानियों मे उनका आत्म-जीवन आवश्यकता से अधिक उभर आया है। जिन कहानियो मे वे स्वयं पात्र रूप मे आये है, उनमे अवश्य वे घुल-मिल गये है और कथानक से पृथक उनका स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं खटकता । जैसे 'चतुरी चमार' मे। इस कहानी मे लेखक कहानी का महत्वपूर्ण पात्र है। उसका और चतुरी का अस्तित्व परस्पर सापेक्ष

है। किन्तु 'देवा', 'सुकुल की बीबी' और 'कला की रूपरेखा' मे क्रमशः लेखक दर्शक, श्रोता और विचारक है। 'देवी' और 'सुकुल की बीबी' में लेखक के जीवन की झलकियाँ कथानक से कोई संबध नहीं रखती। कहानी की भूमिका बाँधने के लिए ही लेखक उनके प्रारभिक भाग मे अपने जीवन का चित्र प्रस्तुत करता है। यदि आत्मचरित केवल प्रारंभ मे होता तो खप भी जाता, किन्तु अनेक कहानियो मे बीच-बीच मे भी आत्मचरित आ गया है, जिससे कहानी का प्रवाह मुड़-मुड़ गया है। 'सुकुल की बीबी' मे ऐसा ही हुआ है। इसमें आत्मचरित भा बहुत लम्बा––लगभग आठ पृष्ठो का है। वस्तुतः ये चारो कहानियाँ सस्मरणात्मक है। सस्मरणों को कहानी के रूप मे प्रस्तुत करने मे उसकी वस्तु-सयोजना में शिथिलता की सभावना बनी ही रहती है। वही कुछ मात्रा मे 'निराला' की उन कहानियो मे मिलती है। किन्तु इससे उनकी कहानियों के रसास्वादन में कोई क्षति नही पहुँचती। वरन् उनमे एक प्रकार का कलात्मक सौन्दर्य आ गया है, जो अपने ढग का अपूर्व है।

अतएव, इस शैली की एक कहानी को छोड़ 'निराला' की सभी कहानियाँ उत्कृष्ट है। 'स्वामी सारदानद महाराज और मै' मे यह शैथिल्य दृष्टिगोचर होता है। इस शिथिलता का कारण यह है कि इसमे न कोई घटना है और न कोई कथा, जिसके कारण कहानी में कोई प्रवाह आता। यह कहानी निबध अधिक लगती है, कहानी कम। वस्तुतः 'स्वामी सदानन्द महाराज और मै' 'निराला' की अत्यन्त सामान्य कहानी है।

'क्या देखा' नामक कहानी मे 'निराला' ने दो प्रकार की शैलियो का उपयोग किया है। इसका प्रारंभिक अंश प्रथम पुरुष में है और अतिम तृतीय पुरुष में। इस शैली द्वय के प्रयोग से इस कहानी की रसानुभूति मे कोई व्यवधान उपस्थित नही हुआ है वरन् एक प्रकार का कलात्मक सौंदर्य आ गया है। 'सुकुल की बीबी' के निवेदन मे स्वयं लेखक ने भी इसे गुण माना है।

पूर्व निरूपण में निश्चित किया जा चुका है कि 'निराला' की कहानियाँ सामान्यतः चरित-प्रधान है। घटना या कार्य का चमत्कार और संघर्ष

उनका प्रधान उद्देश्य नहीं है। मुख्य उद्देश्य है, चरित्रोद्घाटन तथा चरित्रांकन। किन्तु चरित्रांकन के लिए 'निराला' ने पात्रों की भीड़ नहीं लगा ली। उनके कहानियो के पात्र अत्यल्प और गिने-चुने है। वे उतने पात्रों की सृष्टि या निर्वाचन करते हैं, जितने की उन्हें आवश्यकता होती है। प्रायः उनकी कहानी मे तीन या चार पात्र हैं, और आवश्यकतानुसार उनकी संख्या अधिक-से-अधिक पाँच तक है। 'पद्मा और लिली' के मुख्य चरित्र चार है—पद्मा, राजेन्द्र और पद्मा के माता-पिता। 'ज्योतर्मयी' मे मुख्य पात्र केवल तीन है—ज्योति, विजय और वीरेन्द्र। 'कमला' मे भी प्रधान पात्रतीन है—कमला, उसका पति और भाई। 'श्यामा' के भी केन्द्रीय पात्र तीन हैं—श्यामा, बकिम और श्यामा का पिता। श्यामा का पिता यद्यपि अत्यल्प समय के लिए रहता है, किन्तु क्योकि वह शोषण का शिकार है, और लेखक की सवेदना उसे मिली है, इसलिए उसे भी मुख्य पात्रों में माना जाना चाहिए। 'अर्थ' मे केवल दो पात्र है —रामकुमार और उसकी पत्नी। 'प्रेमिका परिचय' मे भी दो पात्र हैं—प्रेमकुमार और उसका मित्र शंकर। शांति, जो प्रेमकुमार को छिप क॰ प्रेम-पत्र लिखती है, कहानी की मुख्य पात्री नही कही जा सकती। 'परिवर्तन' के मुख्य पात्र भी दो ही है राजा महेश्वरसिंह और शत्रुघ्न-सिंह। इन दोनो के पुत्र और पुत्री तो केवल माध्यम मात्र है। 'हिरनी' मे एक ही पात्र है—हिरनी। रानी साहिबा गौण चरित है।

'निराला' की कुछ कहानियो में तो केवल एक ही पात्र है। यदि लेखक को न गिना जाय तो 'चतुरी चमार', 'देवी', 'स्वामी सारदानंद जी महाराज और मैं' तथा 'कला की रूप रेखा' मे केवल एक ही पात्र है। 'सखी,' 'राजासाहब को ठेंगा दिखाया', 'भक्त और भगवान', 'सफलता', 'सुकुल की बीबी' 'श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी,' 'क्या देखा' मे भी दो-तीन से अधिक पात्र नहीं है। अतः 'निराला' की कहानियो में पात्र बहुलता नहीं मिलती। 'निराला' ने पात्र कम संख्या में लिये हैं, किन्तु जितने भी पात्र हैं, उनका गहराई से चरित्रांकन करने का प्रयास किया है। अधिक पात्र-संख्या के कारण कहानी में जो बिखराव और विशृंखलता आ जाती है, उससे 'निराला' की कहानियाँ बच गई है। वस्तुतः संकलन-त्रय के

निर्वाह के लिए अल्प पात्र-योजना लाभकारी सिद्ध होती है।

'निराला' की कहानियों के पात्र दो प्रकार के हैं। उनकी रोमांटिक कहानियों के पात्र 'निराला' की अपनी कल्पना है और यथार्थवादी पात्र जीवन सम्पर्क मे आये वास्तविक व्यक्ति है। 'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी' 'कला', 'श्यामा', 'अर्थ', 'प्रेमिका-परिचय', 'परिवर्तन', 'हिरनी', 'सखी', 'न्याय', 'राजासाहब को ठेगा दिखाया', 'सफलता' 'भक्त और भगवान', 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी' के पात्र कल्पना-प्रसूत है। 'चतुरी चमार', 'देवी', 'स्वामी सारदानन्दजी महाराज, और मैं', 'सुकुल की बीबी', 'कला की रूपरेखा' तथा 'क्या देखा' के पात्र वास्तविक जीवन से लिए है, ये कल्पना के रंग से अनुरंजित नही है। किन्तु पात्रों के संबंध में ऐसी निर्धारण-रेखा खीचना उचित नही है। केवल इस कारण कि अमुक पात्र लेखक की कल्पना-सृष्टि है, उन्हें काल्पनिक नहीं बना देती। वस्तुतः लेखक का कौशल तो इसी बात में है कि वह अपनी कल्पना से पात्रो को कहाँ तक और कितनी सप्राणता दे सकता है। 'निराला' अपने कल्पना-प्रसूत पात्रो मे प्राण-प्रतिष्ठा करने में पूर्ण सफल हुए हैं। वे स्वप्निल जगत के प्राणी नही लगते। उनके पात्र इसलिए सजीव लगते हैं क्योंकि उनसे संबंधित समस्याएँ और वातावरण वास्तविक हैं। 'निराला' ने किसी पात्र की सृष्टि रूढ़ि-विद्रोह दिखाने के लिए की है, यथा —'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी', 'कमला', 'श्यामा' 'श्रीमती, गजानन्द शास्त्रिणी', किसी की शोषण की वेदना दिखाने के निमित्त, यथा 'हिरनी', चतुरी चमार', 'राजा साहब को ठेंगा दिखाया' और 'देवी;' कतिपय कहानियों की पात्र-सृष्टि समाज का ढोंग और दूषित प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन करने के लिए की है, यथा—'स्वामी सारदानंद जी महाराज और मैं'। अन्य कहानियों की पात्र-रचना भी सोद्देश्य है। अतएव, 'निराला' के पात्रों की सजीवता में कोई संदेह नहीं है।

'निराला' के पात्र टाइप नहीं, व्यक्ति है। प्रेमचंद की भाँति उन्होंने विभिन्न सामाजिक स्तर और आर्थिक वर्गो का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र नही अपनाये, न ही उनके पात्र आदर्शवादी है, यद्यपि उन्ही के रोमांटिक उपन्यासों में हमें एक विशिष्ट प्रकार के आदर्शवादी पात्र मिलते

हैं। इस क्षेत्र में, अन्य लेखकों के समकक्ष 'निराला' ने नितान्त मौलिकता प्रदर्शित की है। 'निराला' के पात्र बुद्धिजीवी, किसान-वर्ग, निम्न-वर्ग आदि के अवश्य है, किन्तु वे टाइप रूप मे चित्रित नही है। उनमे वर्गगत वैशिष्ट्य अवश्य हैं, किन्तु उनकी वैयक्तिकता उसके द्वारा नष्ट नही हुई। वस्तुतः 'निराला' के पात्रो मे व्यक्तिगत विशेषताओ और वर्गगत गुणों का सामंजस्य है। चतुरी चमार वर्ग का प्रतिनिधि है और उसमे अपने वर्ग के अनेक लक्षण है। किन्तु उसके चरित्र मे कुछ ऐसी विशिष्टताएँ है, जो उसे अपने वर्ग से अलग करती है। उसकी आत्म जागृति और शोषण से मुक्त होने की चेष्टा उसके अपने चरित्र-बल की द्योतक है। यह चरित्र-दृढ़ता साधारण चमार मे नही मिल सकती। इसी भाँति 'देवी' की पगली साधारण पगलियो की भाँति नही है। वह पागल है, गूँगी है, यही उसकी जातिगत विशेषता है, किन्तु वाणी-विहीन होकर भी वह जिस प्रकार अपना विद्रोह अभिव्यक्त करती है, वह उसका निजीगुण है। अस्तु; 'निराला' के पात्र जातिगत नही, व्यक्ति-वैचित्र्य का प्रकाशन करने वाले है।

'निराला' के चरित्र-चित्रण के सबध मे प्रायः कहा जाता है कि उसमे मानसिक सघर्ष का अभाव है। किन्तु इस कथन मे अधिक सच्चाई नही है। यह आशय है कि उनके चरित्र गूढ़ और रहस्यमय नही है और कही-कही अवसर आने पर वे अन्तर्द्वन्द्व दिखाने से चूक भी गये है। 'कमला' कहानी मे चरमसीमा की स्थिति मे कमला का हृदय-आन्दोलन दिखाने का अवसर था। जब उसके पति और ससुर उसके भाई से अपनी बहन-पुत्री का पाणिग्रहण करने का प्रस्ताव लेकर आते है, तो कमला निर्द्वन्द्व होकर अपनी स्वीकृति दे देती है। जब कि यहाँ अपेक्षित था कि लेखक कमला में प्रतिकार और क्षमा की भावना मे सघर्ष दिखाता। यदि वह इस द्वन्द्व के पश्चात् कमला से स्वीकृति दिलाता, तो कहानी मै अधिक सप्राणता आ जाती।

किन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि 'निराला' का चरित्र-चित्रण जड़, निर्जीव और यांत्रिक है। वस्तुतः उनके चरित्र-चित्रण की स्पदन-शीलता और सजीवता इसी से स्पष्ट है कि उनके पात्रों में हमें मानवीय

दुर्बलता मिलती है। 'निराला' की 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी' मे तो आधुनिक मनोविज्ञान की खोज के भी चित्र है। इस कहानी में मन के चेतन और अवचेतन स्तर के सघर्ष का विश्लेषण है। सुपर्णा हृदय से मोहन को अमित प्यार करती है किन्तु अपने प्यार की तुष्टि न होने पर, वह अपना सारा क्रोध अपने प्रेम-पात्र पर उतारती है। इस क्रोध की अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से नही होती, उसका अन्तर्मन इसकी अभिव्यक्ति विचित्र प्रकार से करता है। उसका चेतन मन पतिपरायण बनने का अभिनय कराता है और वह पति-भक्ति पर लेख लिख-लिख कर उसका प्रचार करती है। किन्तु उसका वह सब ढोग उसकी उस अवचेतन मनोवृत्ति का प्रतीक है, जिसके कारण वह मोहन से अपना प्रतिशोध लेना चाहती है। इस प्रकार सुपर्णा का चेतन और अवचेतन दो विपरीत मनोभावो की अभिव्यक्ति करता है। चरित्रांकन शैली की दृष्टि से 'निराला' की कहानियो मे हमे अभिनयात्मक तथा विश्लेषणात्मक दोनो प्रकार का चरित्र-चित्रण मिलता है। पात्रो के परस्पर कथोपकथनो द्वारा चरित्र पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। 'पद्मा और लिली' मे पद्मा तथा उसके माता-पिता के वार्तालाप मे पद्मा की चरित्र-दृढ़ता, स्पष्टवादिता तथा विश्व-द्रोहिणी प्रकृति प्रकाशित हुई है। 'ज्योतिर्मयी' मे भी विजय तथा ज्योति के कथोपकथनो मे विजय की चारित्रिक कमजोरी तथा समाज-भीरुता एवं ज्योति का समाज-विद्रोह प्रकट हुआ है :

"मानती रहे, चूँकि आप हो लोगो ने, आप ही के बनाए हुए शास्त्रो ने, जो हमारे प्रतिकूल है, हमे जबरन गुलाम बना रक्खा है; कोई चारा भी तो नही—कैसी बात है।" कमल की पखुड़ियो-सी उज्ज्वल बड़ी-बड़ी आँखो से देखती हुई एक सत्रह साल की, रूप की चद्रिका, भरी हुई युवती ने कहा।

"नही, पतिव्रता पत्नी तमाम जीवन तपस्या करने के पश्चात् परलोक मे अपने पति से मिलती है।" सहज स्वर से कहकर निरीक्षक की दृष्टि से युवती को देखने लगा।

× × ×

"मै इतना ही कहता हूँ, आपके विचार समाज के तिनके के लिये

आग हैं!" ताज्जुब की निगाह से देखते हुए युवक ने कहा।

"लेकिन मेरे भी हृदय के मोम के पुतले को गलाकर बहा देने, मुझसे जुदा कर देने के लिये समाज आग है, साथ-साथ यह भी कहिए... मैं बारह साल की थी, ससुराल नहीं गई, जानती भी नहीं, पति कैसे थे और विधवा हो गई!" कई बूंद आँसू कपोलों से बहकर युवती की जाँघ पर गिरे। आँचल से आँखें पोंछ ली, फिर पान लगाने लगी।

"तम्बाकू खाते हैं आप?" युवती ने पूछा।

"नहीं।" युवक के दिल में सन्नाटा था। इतनी बड़ी, इतने आश्चर्य की, इतनी खतरनाक बात आज तक किसी विधवा की ज़बान से उसने नहीं सुनी। वह जानता था, यह सब अखबारो का आंदोलन है। इस तरह की कल्पना भी उसने कभी नही की। कारण, वह कान्यकुब्जों के एक श्रेष्ठ कुल में पैदा हुआ था। युवती की बातो से घबरा गया।

"लीजिए।" युवती ने कई बीड़े दिए।

"आप बुरा मत मानिएगा, मै आपको देख रही थी कि आप कितने दर्दमंद हैं!" युवती ने साधारण आवाज़ मे कहा।

युवक ने पान ले लिए, पर लिए बैठा रहा। "खाइए!" युवती ने कहा—"आपसे एक बात पूछूँ?"

"पूछिए।"

"अगर आपसे कोई विधवा विवाह करने के लिए कहे?" युवती मुस्कराई।

"मैं नही जानता, यह तो पिता जी के हाथ की बात है।" युवक झेंप गया।

"अगर पिताजी की जगह आप ही अपने मुख्तारआम होते?"

संकुचित होकर, फिर हिम्मत बाँधकर युवक ने कहा—"मुझे विधवा-विवाह करते हुए लाज लगती है।"

उपर्युक्त वार्तालाप से नायक-नायिका के चरित्र की सुंदर व्याख्या हो गई है।

'निराला' ने चरित्रांकन की विश्लेषणात्मक प्रणाली का भी यथेष्ट

उपयोग किया है। 'कमला' का अधिकांश चरित्र-चित्रण लेखक ने इसी रूप में किया है।

जिन कहानियों में 'निराला' स्वयं पात्र रूप में आये है, उनमे विश्लेषणात्मक चरित्रांकन अधिक हुआ है। चतुरी के चरित्र की व्याख्या करते हुए वे कहते है, "वह एक ऐसे जाल मे फँसा है, जिसे वह काटना चाहता है, भीतर से उसका, पूरा ज़ोर उमड़ रहा है, पर एक कमज़ोरी है, जिसमे बार-बार उलझकर रह जाता है।"

'देवी' मे भी लेखक ने स्थल-स्थल पर चरित्र सबंधी व्याख्या की है। पात्रो के मानसिक सघर्ष तथा अन्तर्द्वन्द्व को समझने मे 'निराला' की ये व्याख्याए सहायता पहुँचाती है। 'सफलता' कहानी में आभा के हृदयान्दोलन का विश्लेषण दशनीय है : "आभा की इच्छा निकल जाने की न थी, न किसी विषय-वासना से वह खिची थी। नरेन्द्र की तरह उसके भाव ने उसे खीचा, और स्त्रियों की अवहेलना, अवज्ञा जीती हुई प्रतिमा को मृत प्रेम से भी भयकर—इतर पशु से भी तुच्छ समझने वाली धारणा और व्यवहार ने उसे धकेला था। वह विद्वान् आचार्य से शिष्या की तरह मुक्ति की शिक्षा लेने गई थी, बस। हृदय मे जो भाव नरेन्द्र की प्रीति वाली, कुछ काल के लिये उसे एक आवेश में भुला रखते थे, वे इतने पूर्ण थे कि उनसे अधिक की कामना वह कहकर नही कर सकती थी। करना सीखा भी न था। मुक्ति का पथ परिष्कृत होने पर वह हृदय की तुला पट तोलकर अवश्य देखती कि वह कितना प्रशस्त और कितना पवित्र है, तब आगे पैर बढ़ाती तो बढ़ाती..."।

'निराला' ने चरित्रों की व्याख्या ही नही की, उनकी टिका-टिप्पणी कर, अपना निर्णय भी किया है। किन्तु उनके निर्णय प्रेमचंद के निर्णय की भाँति पक्षपातपूर्ण नहीं हैं। उन्होंने चरित्रांकन तटस्थ रहकर किया है। प्रारंभ में ही वे यह नहीं कह देते कि यह आदमी अच्छा है या बुरा है, वरन् उसका चरित्र-प्रकाशन किसी परिस्थिति में डालकर या किसी घटना द्वारा आकस्मिक रूप में कराकर, वह पाठकों पर उसका निर्णय छोड़ देते हैं। और पाठक की संवेदना स्वभावतः उसी ओर होती है जिस ओर लेखक की। इसे हम पक्षपातपूर्ण चित्रण भले ही कह दें; निर्णय नहीं कह सकते।

और यह पक्षपातपूर्ण चित्रण प्रत्येक लेखक करता है, इससे कोई बच नहीं सकता। बिना इसके वह पाठक मे भावनात्मक सवेदना उत्पन्न नहीं कर सकता।

'निराला' की कहानियाँ युग-सत्य की अभिव्यक्ति करती है। उनकी प्रत्येक कहानी तत्कालीन वातावरण और समस्याएँ प्रस्तुत करती है। 'निराला' की अनेक कहानियो में तद्युगीन नारी की विद्रोहिणी प्रकृति, नवयुवको की उच्छृखंलता और समाज-सेवा की प्रवंचनापूर्ण प्रणालियों का उद्घाटन हुआ है। उनकी नारियाँ सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों मे क्रांति उत्पन्न करती है। धर्मगत ढोंग, पिछली दृष्टि और कुसस्कारों का चित्रण कर 'निराला' ने उनकी भर्त्सना की। अतः उनकी कहानियों में देश कालीन विषम और विकृतिपूर्ण वातावरण सजीव हो उठा है। ऊँच-नीच, छूआ-छूत, शोषण और अत्याचार के ऐसे सप्राण चित्र 'निराला' ने खीचे है कि उन्हें पढ़ने से पाठक उस युग में पहुँच जाता है।

'निराला' को वातावरण-सृष्टि की सबसे बडी विशेषता यह है कि कहानो के कथानक ओर चरित्रो के अनुरूप आगे ही उन्होने वातावरण की सृष्टि की है। शहरी कथानक और चरित्रो वाली कहानी में शहरी वातावरण है और ग्रामीण में ग्राम का। 'प्रेमिका-परिचय' में लखनऊ का वातावरण सजीव हो उठा है : "बाबू प्रेमकुमार कैनिंग कॉलेज, लखनऊ मे बी० ए० क्लास के विद्यार्थी है। मेस्टन होस्टल मे रहते हैं। इस समय लखनऊ की बादशाहत अँगरेज़ी हुकूमत में बदल गई है, पर उन्हे बादशाह बाग की हवा लग रही है। चमन, बहार, गुल और बुलबुल के परिस्तान में पैर रखते, सैर करते हैं। उर्दू शायरी का अज़हद शौक, इश्क का नाज़ उठाते हुए चलते, पलको पर एक सदी पहले का स्वप्न। उर्दू के खुद भी कुछ अशआर लिखे है, कभी-कभी हौज़ की बगल मे बैठ कर पढ़ते है।..."

'निराला' को गाँवो और वहाँ के निवासियों से सहज स्नेह था, इसलिए उनके ग्रामीण चित्र शहरी चित्रों से अधिक सजीव और साकार हैं। "आषाढ़ का महीना, एक सप्ताह बीत चुका है। बादलो के टुकड़े आकाश मे क्रीड़ा करते हुए इधर-से-उधर दौड़ रहे हैं। पलको को हलकी कर,

कभी पूरब से पश्चिम, कभी पश्चिम से पूरब को ठडी-ठडी हवा बह रही है। किसान आमो की अच्छी फ़स्ल होने से सुखी है। सभी के मुरझे कपोलो पर हँसी खेलती है। दो-एक दौगरे गिर चुके है। हल चल रहे है। कही-कही जुवार, अरहर , तिल्ली, बाजरे आदि बोए जा चुके है, कही बोए जा रहे है। छोटे-छोटे कपास के पौदे किसी-किसी खेत मे उग रहे है। ईख लहरा रही है--उठाई मेड़े बारिश से कही-कही छट गई है। देहात बरसात के आगम से प्राणों मे सुख-स्पद पाकर प्रसन्न है। बागो मे हरी-हरी घास के मखमली गलीचों पर गाँव के गरीब बच्चे छुई-छुअल, गुलहड़, गिली-डडा खेलते, अखाड़े गोड़कर कूदते, कुश्ती लड़ते हुए अपने-अपने आमो की रखवाली कर रहे है। सुबह से एक पहर दिन तक गाँव के प्राय: सभी बाल-वृद्ध-युवक, किसानो की स्त्रियाँ, आम लेने, पेड़ हिलाने के लिये बागो मे ही एकत्र चहल-पहल करते हुए मिलते है" (श्यामा)।

'निराला' की कहानियो मे वातावरण की वैसी सृष्टि नही है, जैसी वातावरण-प्रधान कहानियो मे होती है। प्राय: वातावरण-प्रधान कहानियो में परिपार्श्व (setting) पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। किन्तु 'निराला' की कहानियो मे हमे ऐसा नही मिलता। हाँ, यथा-वसर जब आवश्यकता हुई है, वातावरण को सजीव बनाने मे वे कभी चूके नही है। 'हिरनी' कहानी मे बाढ़ के बाद का वातावरण सजीव हो उठा है : "कृष्णा की बाढ़ बह चुकी है; सुतीक्ष्ण, रक्त-लिप्त, अदृश्य दाँतो का लाल जिह्व, योजनो तक, क्रूर, भीषण मुख फैलाकर, प्राण-सुरा पीती हुई मृत्यु ताडव कर रही है। सहस्त्रो गृह-शून्य, क्षुधा-क्लिष्ट, नि.स्व, जीवित ककाल साक्षात् प्रेतो से इधर-उधर घूम रहे है। आर्तनाद, चीत्कार, करुणानुरोधो मे सेनापति अकाल की पुन: पुन: शख-ध्वनि हो रही है। इसी समय सजीव शाति की प्रतिमा-सी एक निर्वास बालिका शून्यमना दो शवों के बीच खड़ी हुई चिदबर को देख पड़ी।"

'निराला' की कहानियो के सवाद सक्षिप्त, भाव-व्यजक और पात्रानुरूप है। शिक्षित पात्रो से उन्होंने व्याकरण सम्मत और साहित्यिक भाषा मे बातचीत कराई है तथा ग्रामीण पात्रो से साधारण और लोकभाषा मिश्रित भाषा मे। शहरी और सुशिक्षित पात्रो के कथोपकथन मे वाक्-पटुता और

रोचकता भी है। 'सुकुल की बीबी' की कुँवर सुशिक्षित है, उनके कथोपकथन बड़े रहस्यमय तथा हास्यपूर्ण है :

"हाँ-हाँ जनाब।" देवी जी मेरुमूल सीधा करके बोली—"यह एम० ए० क्लास से आगे की पढ़ाई है, जब पास करके आये थे, हाथ-भर की चोटी थी, समझ में एक वैसी ही मेख।"

"सुकुल की चोटी मेरी निगाह मे सुकुल से अधिक परिचित थी। पर उनके आने पर मैंने उन्हें ही देखा था। चोटी सही-सलामत है या नहीं, मालूम करने के लिए निगाह उठाई कि देवी जी बोली—"अब तो चाँद है। सुकुल को सुकुल बनाते, सच कहती हूँ, मुझे बड़ी मिहनत उठानी पड़ी है।"

उन्हें धन्यवाद दूँ हिम्मत बाँध रहा था कि बोली—"मैं स्वयं सुकुल को सहधर्मिणी नहीं।"

मेरा रंग उड़ गया

मुझे देखकर मेरे ज्ञान पर हँस कर जैसे बोली—"सुकुल स्वयं मेरे सहधर्मी है।"

मैं साहित्यिका को तअज्जुब की निगाह से देखने लगा।

इतने पर उनकी कृपा की दृष्टि मुझ पर पड़ी, बोली—

"मैं आपको भी सहधर्मी बनाना चाहती हूँ।"

मैं चौंका, सोचा, "क्या यह द्रोपदी वाला धर्म है।"

'निराला' के वयस्क पात्रो की संवाद-रचना तो उत्कृष्ट है ही, उनके बालपात्रों के कथोपकथनो मे भी बड़ी सजीवता और स्वाभाविकता है। 'चतुरी चमार' मे 'निराला' जी के चिरंजीव (ब्राह्मण-पुत्र) और चतुरी के पुत्र अर्जुन के (चमार-पुत्र) वार्तालाप में स्वाभाविकता का गहरा रंग है—

"दरवाज़े पर आकर रुक गया। भीतर बातचीत चल रही थी। प्रकाश कुछ-कुछ था। सूर्य डूब रहे थे। मेरे पुत्र की आवाज़ आई—"बोल रे, बोल।" इस वीर-रस का अर्थ मैं समझ गया। अर्जुन बोलता हुआ हार चुका था, पर चिरंजीव को रस मिलने के कारण बुलाते हुए हार न

हुई थी। चूंकि बार-बार बोलना पड़ता था, इसलिए अर्जुन बोलने से ऊबकर चुप था। डाँटकर पूछा गया, तो सिर्फ कहा—"क्या?"

"वही—गुण, बोल।"

अर्जुन ने कहा—"गुड़।"

बच्चे के अट्टहास से घर गूंज उठा। भर पेट हँसकर, स्थिर होकर फिर उसने आज्ञा की—"बोल—गणेश।"

रोती आवाज़ में अर्जुन ने कहा—"गड़ेसा" खिलखिलाकर हँसकर, चिरंजीव ने डाँटकर कहा। 'गड़ेस-गड़ास करता है—साफ़ नहीं कह पाता—क्यो रे, रोज दातौन करता है?"

अर्जुन अप्रतिभ होकर, दबी आवाज मे एक छोटी-सी 'हूँ' करके, सर झुकाकर रह गया। मै दरवाज़ा धीरे से धकेलकर भीतर खम्भे की आड़ से देख रहा था। मेरे चिरंजीव उसे उसी तरह देख रहे थे, जैसे गोरे कालो को देखते है। जरा देर चुप रहकर फिर आज्ञा की—"बोल, वर्ण!"

इस वार्तालाप में एक ब्राह्मण बच्चे का अहकार और एक निम्न-वर्गीय—चमार बच्चे की हीनता तथा संकोच प्रदर्शित हुआ है। स्पष्ट है कि 'निराला' के कथोपकथनो की व्यंजना-शक्ति अदभुत है।

ग्रामीण, विशेषकर किसानो के, कथोपकथनों मे 'निराला' को अत्यंत सफलता मिली है। 'श्यामा' मे सुधुआ लोध-किसान का वार्तालाप उदाहरण योग्य है। "किसान अपने दुःख की बात बड़े करुण साहित्यिक ढग से कहते है, यदि कोई सहृदय श्रोता मिल जाय। सुधुआ खड़ा था। बकिम को बैठने के लिये चारपाई डालकर एक बग़ल ज़मीन पर बैठ गया।

हथेली से अपना सिर पकड़कर, कुछ खाँसकर, संभलकर बोला—"खेती न करें, तो महाजन उधार नही देता। भूखो मरा नही जाता। खेती में साढ़े बारह का पूरोपूर डॉड़ पड़ गया। कुछ न हुआ। एक बैल था, साझे में जोत लेते थे, वह भी मरा, इधर श्यामा की अम्मा थी, वह भी भगवान के यहाँ गई। परमात्मा ने सब तरह से बैठा दिया। अफ़सोस-अफ़सोस मुझको भी हो गया है! काम होता नही। उस किस्त पर किसी

तरह पाँच रुपया चुकाया था। अब के कुछ भी डौल नहीं। बरखा आ गई। छप्पर वैसा ही रक्खा है। कहाँ से पैसे आयें, जो छाया जाय! मिहनत मजूरी का बल नही है। श्यामा, दूसरो की पिसौनी करती है, तब दो रोटी तिसरे पहर तक मिलती है।

इस वार्तालाप के माध्यम से सुधुआ की दशा का ज्ञान होता है। 'निराला' ने निरर्थक सवाद-रचना नही की। उनके सवाद या तो चरित्र पर प्रकाश डालते है, या कथानक पर या फिर स्थिति पर। प्राय: उनके कथोपकथ न सक्षिप्त ही है, किन्तु कही-कही वे दीर्घ भी हो गये है। परन्तु उनकी दीर्घता से कहानी मे नीरसता उत्पन्न नही होने पाई है। क्योकि उन्हे किसी उपदेश, आख्यान या किसी प्रकार की व्याख्या का साधन नही बनाया गया है। इसके अतिरिक्त 'निराला' की कहानियों में हमे आत्म कथन के भी उदाहरण मिलते है।

'निराला' की कहानियो की भाषा सरल, सुबोध, सर्वग्राह्य और स्वाभाविक है। उनको भाषा-शैली उनके पात्रो के भाव और अनुभूतियो का अनुगमन करता है। वह पात्र और प्रसगानुकूल भी है। अभी हम पात्रानुकूल भाषा के उदाहरण प्रस्तुत कर चुके है। अतएव उसकी यहाँ पुनरावृति करना समीचीन नही। यहाँ हम 'निराला' की भाषा की व्यजना शक्ति का निरुपण करेगे।

'निराला' की भाषा बड़ी सजीव और चित्रात्मक है। उनके रूप-वर्णन तथा प्रकृति-चित्रण मे हमे उनकी इस कला का प्रमाण मिलता है। उनकी नायिकाओ का सौदर्य-वर्णन तो अपूर्व है : "कमला सोलहवे साल की अध-खुली धुली कलिका है। हृदय का रस अमृत-स्नेह से भरा हुआ, खिली नावो-सी आंखे चपल लहरो पर अदृश्य प्रिय की ओर परा और अपरा की तरह बही जा रही है।" एक-दो नायिकाओ का ही नही, प्रत्येक नवयोवना नायिका का सौदर्य-चित्रण निराला ने नये-नये रूपको द्वारा किया है। वस्तुत: 'निराला' के गद्य मे रूपक बाँधकर चित्रात्मकता उत्पन्न करने की अदभुत क्षमता है। ऐसे स्थलो पर उनके कवि-हृदय की अभिव्यक्ति भी दर्शनीय है। 'सफलता' कहानी के आरम्भ मे ही वे कवित्व का ऐसा

रस छलकाते है कि पाठक पूर्णतया तन्मय होकर उसका रसस्वादन करने लगता है : "जो हवा दिए के जलते रहने की वजह है, वह दिए को बुझा भी देती है। आभा से सस्नेह अकलुष प्राणा के पावन प्रदीप को पति की जिस निश्चल समीर ने साल भर तक जला रक्खा था, वह उसे बुझाकर, उसकी पृथ्वी से दूर, अन्तरिक्ष की ओर तिरोहित हो गई। साल भर ही मे सुहाग का काजल उस दीपक-प्रकाश के ऊपर रत्नार आँखो मे प्रिय-दर्शन के अजन रूप नही रह गया। आभा आज की शरद् की तरह अपनी सारी रगीनियो को धोकर शुभ्र हो रही है--श्वेत शेफाली सी रगे प्रभात के रश्मि-पात-मात्र से वृन्तच्युत जैसे केवल देवार्चन के लिए चुनी हुई । पर, प्राणो के नीचे, डठल मे, जो रग लाया हुआ है, वह तो शरद् का नही—बसंत का है। उसी के ऊपर बसत के बाद वाले महीनो के ये दल शरद् की आभा से शुभ्र हो रहे है। लालसा-चपल क्या कोई उस पूर्ण विकसित स्खलित शेफालिका-राशि को केसरिए सुगध रग से अपनी बसत की पाग रँगने के लिए वृक्ष के नीचे से चुपचाप चुन ले जायगा ? हाय, यह वह सत्य शेफालिका तो नही ! यह तो केवल देव-चरणो पर चढने के लिए है—माला होकर हृदय पर या रग बनकर आँखो पर चढने के लिए नही ! तभी आभा गाँव के किनारे धुले धवल शिवालय मे देवता-पदो पर प्रत्यक्ष पुष्प-स्वरूप अर्पित होने के लिए जाती है। उसके भीतर हृदय का दीप तो गुल हो चुका है, पर, बाहर अध मदिर-हृदय का दीप वह जला आती है।"

ऐसे भावात्मक स्थलों पर कवित्वमय अभिव्यक्ति की भाषा सस्कृत गर्भित हो गयी है। 'निराला' की भाषा मे व्यजना की अपार क्षमता है। उनके प्रकृति-चित्रण मे तो उनकी भाषा की इस विलक्षण-शक्ति का और भी अधिक परिचय मिलता है । जहाँ कही भी उन्हे प्रकृति-चित्रण का अवसर मिला है, वहाँ उन्होने बड़ी रुचि के साथ, रूपक बाँध कर, 'कोमल-कान्त पदावली' वाली भाषा का प्रयोग किया है। और इसके संयोग से 'निराला' का प्रकृति-चित्रण अत्यंत साकार और सप्राण हो उठा है। उनका 'न्याय' कहानी मे 'प्रभात' का हृदयग्राही वर्णन अत्यत सजीव है। इस कहानी का आरम्भ ही उन्होने प्रकृति-चित्रण से किया है :

"अभी ऊषा की रेशमी लाल साड़ी प्रत्यक्ष हो रही है—भास्कर, मुख अपर प्रान्त की ओर है, केवल केशों की सघन व्योम- नीलिमा इधर से स्पष्ट। मुख का मृदु स्पर्श प्रकाश, लघुतम तूलि जैसे, पर दिगन्तशोभ से उतर कर तंद्रा से अलस जीवों को जगा रहा है। खिली अमलतास की हेमांगी शाखाएँ तरुणी बालिकाओं-सी स्वागत के लिए सजकर खड़ी है। पवन पुनः-पुनः ऊषा का दर्शन शुभ-मधुर सदेश दे रहा है : निविड़ा नीड़ाश्रय से विहग प्रभाती गा रहे है।"

प्रकृति को मुखुरता प्रदान करने के लिए 'निराला' ने कहीं-कही प्रकृति का मानवीकरण कर दिया है। यथा—

"जेठ का महीना, सूरज डूब रहा है। ज़ोरों से बहती हुई मलय-वायु में षोडशी का स्पर्श मिलता है। यह अकेली दक्षिणी हवा बगाल की आधी कविता है। प्रासाद-शिखरों से सुनहरी किरणें लिपटी हैं। उन्ही के प्रेम की साँस जैसे दक्षिणी हवा में बह रही है। बड़े-बड़े तालाबों में श्वेत और रक्त कमल, खुले हुए अनुभव-जैसे लोट रहे हैं।"

भाव और अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए 'निराला' ने प्रतीकों का सहारा लिया है—

"उसका नाम हिरनी रक्खा था। वह जिस रोज रनवास में आई थी, तब से आज तक, उसी तरह, अरण्य थी, दल से छुटी हुई, छोटी हरिणी-सी, एकाएक खड़ी होकर, सजग-दृग, पार्श्व-स्थित ज्ञान-सा प्राप्त करने लगती है कि वह कहाँ आई, यहाँ कोई भय तो नही। दृष्टि के सूक्ष्मतम तार इस पृथ्वी के परिचय से नहीं, जैसे शून्य आकाश से बाँधे हुए हों; जैसे उसे पृथ्वी पर उतारकर विधाता ने एक भूल की हो। उसके इस भाव के दर्शन से 'हिरनी' नाम, कवि शब्द की तरह, रानी के कंठ से आप निकल आया था।"

'निराला' की भाषा में अनुभाव एवं मुद्राओं के अंकन में इतनी चित्रात्मकता है कि वे नाटकों का-सा आनंद देती हैं। पद्मा के सम्मुख जब उसके पिता विवाह का प्रस्ताव रखते हैं, तो उसे अच्छा नहीं लगता। मूक रहकर भी उसके अनुभावों से उसके हृदय की व्यथा व्यक्त हो जाती है :

"पद्मा के हृदय के खिले गुलाब की कुल पखड़ियाँ हवा के एक पुरज़ोर झोंके से काँप उठी। मुक्ताओं-सी चमकती हुई दो बूंदे पलकों के पत्तों से झड़ पड़ीं। यही उसका उत्तर था।" इसी भाँति जब उसके पिता उस पर झूठा लाछन लगाते है, तब "पद्मा जेठ की लू में झुलस रही थी, स्थल-पद्म-सा लाल चेहरा तमतमा रहा था। आँखों की दो सीपियाँ पुरस्कार की दो मुक्ताएँ लिए सगर्व चमक रही थी।...पद्मा उसी तरह खड़ी दीपक की निष्कंप शिखा-सी अपने प्रकाश में जल रही थी।"

'निराला' को भाषा-शैली कोमल पदावली और काव्यात्मकता से युक्त है। उसमें हास्य और व्यग्य का भी सुंदर पुट है। 'सुकुल की 'बीबी' मे तो हास्य और विनोद फूटा पड़ता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है :

"निगाह नीची कर मुस्कराती हुई उन्होने अपना प्याला होठो से लगाया। आधी चाय चुक जाने पर पूछा—"आप मेरे सहधर्मी हैं तो?"

पेट में, उतनी ही चाय से समदर लहराने लगा। ऊपर तूफ़ान! श्याम तट पर भावों के कितने सजे सुदृढ़ मकान उड़ गए। ऐसी खुशी हुई। कहा—"लेकिन आप, लेकिन सुकुल की..."

"बीबी है—? हाँ, हूँ।"

"फिर मै..."

"कैसे बीबी बना सकता हूँ?"

ऐसा धर्म-संकट जीवन मे कभी नहीं पड़ा। मेरा सारा समन्दर सूख गया। तूफ़ान न जाने कहाँ उड़ गया। सिर्फ़ रेगिस्तान रह गया, जो इस ताप से और तपने लगा।

'निराला' की भाषा-शैली व्यंजनात्मक और काव्यात्मक है, किन्तु कथोपकथनों में सस्कृत-गर्भित भाषा उनकी कम है। भावों की सही अभिव्यक्ति के लिए उन्होने उर्दू, हिन्दुस्तानी तथा अँगरेज़ी शब्दों का मनमाना उपयोग किया है। सुकुल की बीबी का जन्म से मुसलमानी घर और वातावरण मे पालन-पोषण हुआ इसलिए उनकी भाषा में उर्दू और हिन्दुस्तानी शब्दो का बहुत मात्रा मे प्रयोग है : "मिसेज़ सुकुल से शादी करके सुकुल के पिता ने और सुकुल ने, मुमकिन है, भूल की हो। मैने यह ज़रूर सोचा कि मेरे कारण सुकुल की मुसीबतें बढ़ सकती हैं, पर साथ

ही यह खयाल आया कि कोई भी पहलू उठाइए, सामने मुसीबत है—अब क़दम पीछे नहीं पड़ सकता। जहाँ सुकुल हर चाल पर चूकते थे, वहाँ मैंने पहले ही मात दी..."

हिन्दू वातावरण में पले पात्रों से भी 'निराला' ने उन उर्दू तथा हिन्दुस्तानी शब्दो का प्रयोग कराया है, जो आज हमारी दैनिक बोल-चाल की भाषा मे घुल-मिल गए है, यथा—दाखिल, गफलत, वाक़िफ, हैसियत, पोशीदा, किस्मत, खुराफात, तारीफ, बदनामी, रिश्ता, तअज्जुब, निगाह, चेहरे, परवरिश, बाबत, सुबूत, मोहताज, राय, क़ायम, तारीफ, तालीम, सलाह, लिहाज़ा, बाकी, दिलजमई, कारोबार, बरदाश्त, अलफ़ाज़, तहकीक़ात, नकाब, ऐतराज़, मारफ़त।

अँगरेजी शब्दो का 'निराला' की भाषा मे कम प्रयोग हुआ है। उर्दू, हिन्दुस्तानी शब्दो मे हमे सज्ञा, क्रिया, विशेषण आदि सभी के शब्द मिलते है, किन्तु अँगरेज़ी शब्द प्रायः सज्ञा के ही है। यथा होस्टल, मैगज़ीन आदि। एकाध स्थल पर भावाभिव्यक्ति के लिए 'डिक्टेट' आदि क्रियाओ का भी प्रयोग किया है।

कहानी की शैलियाँ पाँच प्रकार की होती है—ऐतिहासिक शैली, आत्मचरितात्मक शैली, पत्र-शैली, डायरी-शैली और नाटकीय शैली। इसमे से केवल डायरी-शैली को छोड़कर 'निराला' ने अन्य सभी शैलियों का उपयोग किया है। किन्तु एक कहानी मे केवल एक शैली विशेष प्रयुक्त नही है, वरन् उनका सम्मिश्रण है। 'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी', 'कमरा', श्यामा', परिवर्तन', 'हिरनी', 'सखी', 'न्याय', 'राजासाहब को ठेगा दिखाया', और 'सफलता', मे मुख्यतः नाटकीय शैली प्रयुक्त है, किन्तु साथ-साथ स्थल-स्थल पर इसमे ऐतिहासिक शैली का भी उपयोग हुआ है। 'अर्थ', 'राजा साहब को ठेगा दिखाया', 'भक्त और भगवान' तथा 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी' मे ऐतिहासिक शैली की प्रधानता है। 'प्रेमिका-परिचय' तथा 'अर्थ' मे ऐतिहासिक शैली के साथ पत्रो का भी उपयोग किया है। 'क्या देखा' मे चार शैलियो का प्रयोग है-प्रारम्भ मे आत्मकथात्मक, फिर ऐतिहासिक और नाटकीय तथा अंत में

पत्रात्मक। आत्म-कथात्मथक शैली की कहानियाँ है—'चतुरी चमार' 'देवी', 'स्वामी सारदानन्द जी महाराज और मैं', 'सुकुल की बीबी' और 'कला की रूपरेखा'। 'चतुरी चमार' और 'सुकुल की बीबी' मे अन्य शैलियो का भी उपयोग हुआ है। अतः शैली की दृष्टि से 'निराला' की रुचि किसी विशिष्ट शैली पर केन्द्रित नही है। कहानी के भाव और विषय के अनुसार उन्होने शैली अपनायी है। जो शैली पाठको मे अधिक से अधिक भावनात्मक सवेदना उत्पन्न करने में सहायक हो सकती थी, उसे ही उन्होने चुना है।

यत्र तत्र हम अनेक स्थलो पर कह आये है कि 'निराला' के सम्पूर्ण कृतित्व का कुछ-न-कुछ उद्देश्य अवश्य है। 'निराला' की कहानी-रचना भी निरुद्देश्य नही है। प्रत्येक कहानी मे 'निराला' का उद्देश्य निहित है। किन्तु उनकी कहानियो का उद्देश्य उपदेश और शिक्षा देना नही है। उनकी कहानियाँ किसी न किसी प्रकार की सामाजिक, धार्मिक और मानसिक विषमता, विकृति का उद्‌घाटन करती है। 'निराला'केवल समस्याएँ प्रस्तुत करके ही रह जाते है, उन्होने प्रेमचंद की भाँति उनके समाधान उपस्थित नही किये। समाधान प्रस्तुत न करनेका कारण यह यह है कि 'निराला' की दृष्टि विशुद्ध आदर्शवाद पर कभी नही रही। अतएव, उन्होने प्रेमचद की भाँति पात्रों से कभी भी आश्रमो और अन्य संस्थाओ की स्थापना नही कराई। यदि कही समाधान प्रस्तुत भी किए है, तो वे ऐसे है जो यथार्थ जीवन मे अपनाने योग्य हैं। 'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी' के समाधान ऐसे ही है। अतः 'निराला' ने अवास्तविक और अपनाये न जा सकने वाले समाधान देकर कहानियों को यथार्थ से दूर नही किया है।

'निराला' के कहानी-साहित्य के सिंहावलोकन से यह निष्कर्ष निकलता है कि उन्होने भाव तथा विषय को अधिक महत्त्व दिया है—शिल्प को कम। वस्तुतः उन्होने कहानी-संग्रह की ओर विशेष ध्यान ही नही दिया। उन्होने जो कुछ भी कहानी-रचना की है वह अत्यत सरल एवं सीधे-सादे ढंग से की है; और इसके द्वारा उनकी कहानियो मे जो-कुछ शिल्पगत

सौंदर्य आ गया है, वह अनायास का आया हुआ है। इसलिए उनकी कहानियों का रचना-विधान अधिक परिष्कृत भी नहीं है। उन्होने तो अनुभूति की अभिव्यक्ति पर अधिक से अधिक ध्यान दिया और उसमें वे अद्‌भुतरूप से सफल भी हुए हैं।

अध्याय ५

'निराला' के कथा-साहित्य में नारी

'निराला' के काव्य और कथा-साहित्य दोनो मे नारी अत्यंत महत्वपूर्ण वर्ण्य-विषय रहा है। उनके लगभग प्रत्येक उपन्यास और कहानी में किसी न किसी रूप में नारी विषयक समस्याएँ उभरी है। यही नहीं, उनके अधिकांश उपन्यास और कहानियो के शीर्षक भी नायिकाओं के नाम पर है, यथा 'अलका', 'निरुपमा', 'प्रभावती', 'पद्मा और लिली', 'ज्योतिर्मयी', 'कमला', 'श्यामा', 'सुकुल की बीबी', 'श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी', 'देवी'; आदि। 'निराला' के कथा-साहित्य मे नारी का इतना गरिमामय स्थान होने का कारण एक ओर तो स्वयं 'निराला' का उदार चित्त-स्वभाव था और दूसरी ओर तत्कालीन परिस्थितियाँ थीं। नारी विषयक मार्क्सवादी विचारधारा से तो 'निराला' प्रभावित थे ही, साथ ही तद्युगीन समाज-सुधारवादी आंदोलन ने भी उन्हें कम अभिभूत नही किया था। समाज सुधारवादी आंदोलन में—'आत्मीय सभा' (१८१५), 'ब्रह्मसमाज' (१८२८), 'आर्यसमाज' (१८७५) ईसाई मिशनरियों तथा गाँधी जी द्वारा स्त्री संबंधी रूढियों, कुसंस्कारों और अंधविश्वासों को आमूल नष्ट करने के भगीरथ प्रयत्न हुये। इन आंदोलनों के फलस्वरूप सती प्रथा, बालविवाह, बहु विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा तथा वेश्यावृत्ति आदि पर कठोर नियंत्रण हुआ। इसके विपरीत विधवा विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, स्त्रीशिक्षा आदि को बल मिला। वस्तुतः सुधारवादी आंदोलनों द्वारा नारी-जागरण को जो प्रोत्साहन मिला, वह स्तुत्य है। इन्ही आंदोलनों का परिणाम था कि एक दीर्घ युग के बाद नारी को समाज में महत्वपूर्ण और सम्माननीय स्थान मिला। अब पुरुष के समकक्ष नारी का अस्तित्व किसी भी दृष्टि से हीन नहीं रह गया।

स्त्रियों के लिए शिक्षालय खुले। रूढ़ियो में पली साधारण अशिक्षित और विवेकहीन स्त्री में शिक्षा और नये विचारों के अभ्युदय ने स्वयं स्त्री में आत्म-गौरव और स्वाधीनता के भाव जागृत किये। पाश्चात्य समाज और वहाँ की स्त्रियों की स्थिति का अध्ययन करने से भारतीय नारी अपने अधिकारों के प्रति सचेष्ट हो गई! उसने घर मे तो अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया ही, बाहर के कार्यों मे भी वह सक्रिय भाग लेने लगी। तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलनो मे विपुल सख्या में स्त्रियों ने उत्साहपूर्ण भाग लिया और अपने अधिकारो की रक्षा के हेतु अनेक सगठन बनाये। इन संगठनों में 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन', 'स्त्रियो की राष्ट्रीय समिति', 'विश्वविद्यालय स्त्री संघ', 'कस्तूरबा राष्ट्रीय स्मारक समिति' प्रमुख हैं।

इसी काल में गाँधी जी ने नारी को मिथ्याडम्बर और अंधविश्वासो से मुक्त कर नारी-जागरण को प्रोत्साहन दिया। उन्होने बताया कि स्त्री पुरुष के आदर्श और अधिकार समान है। इनमें किसी प्रकार की असमानता वर्जित है। नारी और पुरुष के कार्यक्षेत्र मे भी वे किसी प्रकार का भेद नही मानते थे। गाँधी जी ने नारी का पथ-प्रदर्शन किया और उसे रचनात्मक कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया। उन्ही के अथक परिश्रम का परिणाम था कि तत्कालीन नारी ने विपुल सख्या मे राष्ट्रीय आंदोलनो मे भाग लिया था। नारी को पूर्ण स्वतत्रता देने पर भी गाँधी जी नारी को आर्थिक स्वतंत्रता देने के समर्थक न थे। इस विषय मे भारतीय नारी ने विदेशी विचारकों से प्रेरणा ली। मार्क्स और लेनिन ने नारी को आर्थिक क्षेत्र में भी स्वतंत्र माना। उनका कहना था कि आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुये बिना नारी की अन्य क्षेत्रों की स्वतत्रता व्यर्थ है। यही कारण है कि तत्कालीन कम्युनिस्ट पार्टी की कार्यकर्त्री महिलाएँ क्रांतिकारी कार्यो में भी सक्रिय सहयोग देती थी।

अतएव, तत्कालीन भारतीय समाज में नारी पूर्ण स्वाधीन हो गई थी। वह किसी रूप मे पुरुष वर्ग की मुखापेक्षी नही रही। आर्थिक रूप से भी वह स्वावलम्बी बनी। 'निराला' ने नारी-स्वाधीनता और स्वावलम्बन

का समर्थन एवं पोषण किया। 'बाहरी स्वाधीनता और स्त्रियाँ' नामक लेख में 'निराला' ने बताया कि नारी पुरुष के स मानाधिका रकी अधिकारिणी है और वह बिना पुरुष के भी स्वावलम्बी बनकर रह सकती है। "अब घर के कोने मे समाज और धर्म की साधना नही हो सकती। जमाने ने रुख बदल दिया है। हमारे देश की लड़कियों पर बड़े-बड़े उत्तरदायित्व आ पड़े है। उन्हे वायु की तरह मुक्त रखने मे ही हमारा कल्याण है। तभी वे जाति, धर्म तथा समाज के लिए कुछ कर सकेगी। उन्हे दबाव में रख इस देश के लोग अपने जिस कल्याण की चिंतना मे पड़े है। वह कल्याण कदापिन ही, प्रत्युत निरी मूर्खता है[1]।" फलतः 'निराला' के विचारानुरूप उनके कथा-साहित्य की समस्त नारियाँ सामाजिक, आर्थिक तथा प्रेम के क्षेत्र में पूर्ण स्वाधीन और स्वच्छद है। उन्हें विवाह और प्रेम की पूर्ण स्वतत्रता है। 'निराला' ने अपने समकालीन लेखको की भाँति नारी को दया एव करुणा की दृष्टि से नहीं देखा, वरन् सम्मान एवं सहानुभूति की दृष्टि से देखा है। 'निराला' के समकालीन लेखकों ने विधवा-विवाह इसलिए आवश्यक बताया कि स्त्रियो को रोटी -कपड़े के लिए दूसरों का मुँह न देखना पड़े। किन्तु 'निराला' ने विधवा विवाह को आर्थिक नही नैसर्गिक आवश्यकता बताया, जिससे नारी अकुठित और सहज जीवन व्यतीत कर सके।

इस प्रसंग मे यह बात उल्लेखनीय है कि 'निराला' ने अपने ढंग से विधवा और वेश्याओ की समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है। प्रेमचंद का दृष्टिकोण सुधारवादी था, अतएव उनके समाधान की परिसमाप्ति आश्रमो मे हुई है किन्तु 'निराला' ने व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया है। यहाँ हम 'निराला' और बेचन शर्मा 'उग्र' के दृष्टिकोणो मे साम्य पाते है। 'उग्र' के 'शराबी' (१९३०) का नायक मानिकलाल वेश्या जवाहर से विवाह कर सामाजिक मान्यताओं की अवहेलना करता है, 'निराला' के

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'प्रबंध प्रतिमा', पृष्ठ १३०-१३३ सं० १९९७, भारती भंडार, इलाहाबाद।

अप्सरा' (१९३१) का नायक राजकुमार गंधर्वकुमारो कनक से विवाह करता है। इसी भाँति 'निराला' ने विधवा-विवाह की सामस्या सुलझाई है। 'ज्योतिर्मयी' मे लेखक एक युवक से विधवा का विवाह कराता है। इस संदर्भ में यह कह देना भी प्रसगानुकूल है कि 'निराला' के पुरुष-पात्र स्त्री-पात्रों के सम्मुख फीके पड़ गये हैं, क्योकि वे समाज-भीरु है। 'अप्सरा' का नायक राजकुमार अनेक अंतर्द्वद्वो के बाद, मित्र की पत्नी के अथक प्रयास के फलस्वरूप ही, कनक से विवाह करने को प्रस्तुत हो पाता है। उसमें बार-बार पूर्व सचित संस्कार जाग्रत हो उठते है और वह कनक से विवाह करने से कतराता रहता है; यद्यपि वह उसके अतुल सौदर्य से अभिभूत हो चुका है। 'ज्योतिर्मयी' का विजय तो ज्योतिर्मयी के सम्मुख और भी अधिक निस्तेज और दुर्बल प्रतीत होता है। विधवा-विवाह करते हुए उसे लाज लगती है। और जब उसके मित्र के प्रयत्नों के फलस्वरूप छल से विजय के साथ ज्योतिर्मयी का विवाह हो जाता है, तो ज्योतिर्मयी के हृदय में इस स्यार पुरुष के लिए तीव्र घृणा मध्यान्ह की ज्वाला की तरह भभक उठती है। वस्तुतः 'निराला' के पुरुष-पात्र तत्कालीन युवक-समाज की मनोवृत्ति और हृदयान्दोलन को प्रकट करते हैं। तद्युगीन युवकों में आत्मिक साहस का अभाव था। 'निराला' ने इन युवकों पर प्रत्यक्ष व्यंग्य किया है।

अपने काव्य में 'निराला' ने नारी के शृंगारी रूप का चित्रण ही अधिक किया है, यद्यपि 'विधवा'[१] तथा 'तोड़ती पत्थर'[२] में क्रमशः विधवा और श्रमजीवी नारी का करुण और सहानुभूति पूर्ण अंकन हुआ। किन्तु कथा-साहित्यमें हमें 'निराला' की भिन्न प्रकार की नारी के दर्शन होते हैं। यद्यपि ये नारियाँ सोलह या अठारह वर्ष की 'ज्योति के चन्द्र पुष्प

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'अपरा' (कविता संग्रह), पृष्ठ ५६–५७, सं० २००३, साहित्यकार संसद, प्रयाग।

२. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'अनामिका' (कविता संग्रह), पृष्ठ ७९–८०, सं० १९९४, भारती भंडार, इलाहाबाद।

की तरह'[1], 'एकान्त कुंज की कली-सी'[2] 'अप्सराओ सी'[3] 'अधखिली कलिका'[4] है, फिर भो इन कोमलांगियों मे विद्रोह और आत्माभिमान की अग्नि प्रज्ज्वलित है और उनके विचार 'समाज के तिनके के लिए आग है।' वे अपने अधिकारो के प्रति जागरूक ही नही, उनके लिए जी-जान से लड़ने वाली हैं। वे चाहे सुशिक्षित हो या अर्ध-शिक्षित या बिना पढ़ी, सभी समाज की रूढ़ियो और कठोर बंधनो को तोड़ने का साहसपूर्ण उद्योग करती है। ऊँच-नीच और जाति-बंधनो को वे स्वयं तो तोड़ती ही है, इसके लिए वे पुरुषों को भी साहस और बल देती है। 'निराला' के कथा-साहित्य के अध्ययन से हमे यह भी अवगत होता है कि वे जाति-बंधन के घोर विरोधी थे। यही कारण है कि उनकी नारियाँ जाति-बंधन की शृखला तोड़कर प्रेम-विवाह करती है। 'श्यामा' कहानी में लेखक ने एक लोध बालविधवा का विवाह कुलीन ब्राह्मण-पुत्र बंकिम से कराया है। 'सुकुल की बीबी' मुसलमान है, किन्तु वह साहस के साथ ब्राह्मण सुकुल से विवाह कर लेती है। 'निराला' ने विजातीय विवाह का एक और समाधान भी प्रस्तुत किया है। 'लिली' और 'पद्मा' के नायक-नायिका परस्पर हार्दिक प्यार करते हैं और विजातीय होने पर भी विवाह-संबंध स्थापित करना चाहते है। किन्तु नायिका के पिता मरते दम तक यह नही होने देते और मृत्यु-शय्या पर भी अपनी पुत्री से वचन ले जाते है कि वह विजातीय से विवाह नही करेगी। अब एक ओर नायिका पद्मा अपने वचन पर अटल रहती है और दूसरी ओर अपने प्यार को विघटित नही करना चाहती। अतः वह आजन्म अविवाहित रहकर अपने विचारों का संचार बालिकाओं में

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'अप्सरा', पृष्ठ ११–१२, सं० २०१७, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ।

२. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'लिली', पृष्ठ ९, सं० २०१३, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ।

३. वही, पृष्ठ २६।

४. वही, पृष्ठ ३८।

करती है। "जिस जाति के विचार ने उसके पिता को इतना दुर्बल कर दिया था, उसी जाति की बालिकाओं को अपने ढंग पर शिक्षित कर अपने आदर्श पर लाकर, पिता की दुर्बलता से प्रतिरोध लेने का उसने निश्चय कर लिया।"

पुरुषों के पाशविक और निरंकुशता के प्रति भी 'निराला' की नारियाँ क्रांतिकारिणी और प्रतिद्वन्द्विनी है। 'कमला' कहानी की एक पात्री, कमला के अपने पति के अत्याचारों को सहन करने के विरोध में कहती है, "मैं होती तो चपत का जवाब दूने कस की चपतकस कर देती -उन्हीं की तरह अपना, भी दूसरा विवाह साथ-साथ करती, ऊपर से न्योता भेजती कि आइए जनाबमन्, मेरे शौहर से मुलाक़ात कर जाइए"। 'निराला' की क्रांतिकारी और विद्रोही प्रकृति जैसे इन शब्दों में फूट पड़ी है। इसीलिए प्रायः आलोचक कहते है कि 'निराला' का व्यक्तित्व पुरुष के पात्रों के माध्यम से नहीं, स्त्री पात्रों के माध्यम से अधिक मुखर हुआ है।

'निराला' की नारियाँ प्रबुद्ध भी है और प्रगतिशील भी। सभी नारियाँ उन्मुक्त-प्रेम की पोषक हैं। 'कनक' (अप्सरा), 'अलका' 'प्रभावती', 'निरुपमा', 'पद्मा', 'ज्योतिर्मयी', 'श्यामा', 'सुकुल की बीबी', 'श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी' आदि स्वच्छंद प्रेम की स्पष्ट व्याख्या करती है। ज्योतिर्मयी तो विधवा होते हुए भी अपनी बहन के देवर को प्यार करने लगती है। 'पद्मा' और 'लिली' में पद्मा स्वच्छंद-प्रेम की स्पष्ट व्याख्या करती है कि विवाह और प्यार एक बात नहीं है। विवाह करने से होता है, प्यार आप होता है। कोई किसी को प्यार करता है, तो इसका यह अर्थ नहीं कि वह उससे विवाह भी करता है। इस व्याख्या से यह ध्वनि निकलती है कि विवाह का अर्थ यह नहीं कि पति पत्नी मे परस्पर प्रेम भी हो। 'सुकुल की बीबी' के सुकुल विवाहित होने पर भी दूसरी स्त्री से उन्मुक्त-प्रेम करते है। वास्तव में 'निराला' से पूर्व नारियों द्वारा स्वच्छंद प्रेम का पोषण इतने सशक्त ढंग से नही हुआ था। 'निराला' की नारी अपने उन्मुक्त-प्रेम का तिरस्कार नहीं सह सकती और जो उसके प्यार का तिरस्कार करता है, उसके प्रति वह प्रतिहिंसा से भर उठती हैं। 'ज्योतिर्मयी' की नायिका अपने प्यार के मूल्य को न समझने वाले नायक को घृणा की दृष्टि से

देखती है। 'श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी' भी नायक मोहन की समाज-भीरुता की खिल्ली उड़ाती है, क्योंकि मोहन की भीरुता के कारण ही अधेड़ से विवाह कर, उसे अपना जीवन अपने हाथों ही नारकीय बनाना पड़ता है। (समाज-विहित विवाह को 'निराला' ने अधिक प्रश्रय नही दिया क्योंकि, उससे समाज मे विकृति तथा युवक हृदयों में कुंठाएँ पनपती हैं। यही कारण है कि 'निराला' ने स्त्रियो को अन्य सामाजिक समानाधिकार देने के साथ रोमांस की भी पूरी छूट दी है। इसीलिए उनकी नायिकाओं की सहेलियाँ भी उनके उन्मुक्त प्रेम मे सहायक हुई हैं। 'अप्सरा' की तारा, 'निरुपमा' की कमल, 'प्रभावती' की यमुना, 'सखी' की जोत ऐसी ही सखियाँ है, इन सब सखियों में स्नेह और उत्सर्ग की भावना सन्निहित है।

'निराला' की समस्त नारियाँ प्रबुद्ध, प्रगतिशील और विद्रोहिणी अवश्य हैं, फिर भी 'निराला' ने कही भी उनके शील को बिखरने नही दिया है।[1] कमला आत्माभिमानिनी होते हुए भी पति-परायणा है और पति-परित्यक्ता होकर भी कभी पति का अनिष्ट नही चाहती। इसी भाँति 'अप्सरा' की कनक वेश्या-पुत्री होते हुए भी शीलवती है। सुशिक्षित निरुपमा मे अपार शील है और अलका अपने स्त्रीत्व की रक्षा के लिए हत्या तक करती है। यहाँ 'निराला' मे हमें भारतीय संस्कार बोलते हुए दीखते हैं। 'निराला' पुरातन भारतीय-संस्कृति के अनन्य उपासक थे। इसी लिए वे भारतीय नारी का पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध से अभिभूत होना बुरा समझते थे। आधुनिक नारियो के संबंध में उनका विचार था कि "वे इतना बहिर्मुख तथा दूसरे राष्ट्रो की ऐश्वर्यवती महिलाओं के रूप-रंग, हाव-भाव, केश-वेश आदि की तरफ बढ़ी हुई है कि उन्हें अपनी आत्मा की ज्योति की तरफ देखने का अवकाश ही नही मिलता।" स्पष्ट है कि 'निराला' नारी को केवल उन बातो में प्रगतिशील देखना चाहते थे, जो

---

१. 'चोटी की पकड़' (१९४६) की मुन्ना बाँदी अवश्य अपवाद है, किन्तु वह एक वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करती है, सामान्य नारी का नहीं।

कल्याणकारी है, शुभ है।[1] जिस आचरण को अपनाने से नारीत्व का हनन हो, उसे वे त्याज्य कहते थे। कदाचित् इन्ही विचारों का परिणाम है कि 'निराला' की नारी अत्यत स्वस्थ है और उसका चित्रण सूक्ष्म, तटस्थ एवं संयमित हुआ है। निराला'के कथा-साहित्य में नारी का स्थूल चित्रण कही नहीं मिलता। उनकी कविताओ में यद्यपि नारी के शृंगार पक्ष का यथेष्ट अंकन है, किन्तु उसमें भी वासना तथा अश्लीलता का अभाव है। यही कारण है कि 'निराला' के नारी-चित्र हमारे हृदय में अत्यंत सात्विक भाव जाग्रत करते हैं)।

अस्तु,; 'निराला' के कथा-साहित्य में हमें नारी का सत् रूप ही मिलता है। वर्ग की दृष्टि से 'निराला' ने उच्च, मध्य तथा निम्न वर्ग, एवं शिक्षा की दृष्टि से शहरी और ग्रामीण नारी की मनोवृत्तियों, मनोदशाओं और विद्रोह को स्वर दिया है। 'निराला' की ग्रामीण नारी मे विद्रोह तथा प्रतिशोध की अद्भुत क्षमता है। उनके अधूरे उपन्यास 'चमेली' में दो नारी-पात्र प्रमुख हैं और दोनों ही में प्रतिकार की वह उत्कट भावना है, जो पुरुषों में नही है। चमेली के बाप में अन्याय तथा शोषण का विरोध करने की शक्ति नहीं है, किन्तु स्वयं चमेली और उसकी मा में वह आत्म-चेतना तथा जागरूकता है, जिनके सामने समाज के ठेकेदारों को भी मुँह की खानी पड़ती है। स्पष्टतः 'निराला' की नारी दुर्बल और क्षीण मनोबल की नहीं है।

अतएव 'निराला' के कथा-साहित्य की नारी और उसका चित्रण, अपने में पूर्ण और स्वस्थ है। तथापि 'निराला' के नारी-चित्रण में एक न्यूनता की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट हुए बिना नही रहता। 'निराला' ने राजनीतिक तथा तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलनो में भाग लेने वाली महिलाओं को अपने कथा-साहित्य का वर्ण्यविषय नही बनाया, जब कि तद्युगीन परिस्थितियों में ऐसी नारी अपना विशिष्ट आकार निर्मित कर रही थी। इस नारी के महत्त्व को भुला देना, बड़े आश्चर्य की बात है। राजनीति में

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'प्रबंध पद्म', पृष्ठ १५०–१५१, सं० १९१९, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ।

भाग लेने के लिए उसे किन-किन सामाजिक तथा पारिवारिक संघर्षों का सामना करना पड़ता था, यह कथा-साहित्य के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय हो सकता था, किन्तु 'निराला' इस गौरवशाली नारी के प्रति उदासीन रहे। सभवतः इसके मूल में 'निराला' की राजनीति संबंधी उदासीनता है। कारण चाहे कुछ भी हो, किन्तु उपर्युक्त न्यूनता 'निराला' के नारी-चित्रण के महत्त्व को किसी भी भाँति कम नही करती, क्योकि उन्होंने जिस प्रकार की भी नारी का अंकन किया है, वह स्वयं मे पूर्ण है।

अध्याय ६

हिन्दी कथा-साहित्य में 'निराला' का स्थान

आलोच्य विषय के रचना-काल से पूर्व हिन्दी कथा-साहित्य पूर्ण समृद्ध होचुका था। प्रेमचद, प्रसाद, उषादेवी मित्रा, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', वृंदावन लाल वर्मा, बेचन शर्मा 'उग्र', जैनेन्द्रकुमार की उत्कृष्ट रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी थी। इनसे पूर्व का हिन्दी कथा-साहित्य मात्र मनोरंजन का उपकरण और उपदेश देने का साधन था। इसका कला-पक्ष भी परिष्कृत नही था। प्रेमचंद के प्रवेश से उपन्यास और कहानी का भाव एव कला पक्ष निखरा। प्रेमचंद भी समाज के सत्पीड़न के शिकार थे, इसलिए उन्हें उस पीड़ा की अनुभूति बड़ी गहरी थी। उनके कथा-साहित्य में हमे दलित और पीड़ित वर्ग का अतीव सहानुभूतिपूर्ण चित्रण मिलता है। किन्तु प्रेमचंद के पात्रो की वेदना अर्थाश्रित है, इसलिए उनके कृतित्व मे स्थूल समस्याएँ ही अधिकतर उभर सकी है। इस वर्ग की अन्य प्रकार की वेदना और क्लेश की अभिव्यक्ति प्रेमचंद ने नहीं की। 'निराला ने इस विषय मे अभूतपूर्व कार्य किया। उनके पिकारेस्क उपन्यासों के नायक कुल्लीभाट और बिल्लेसुर अर्थ-सकोच से उतने अधिक पीड़ित नही है, जितने सामाजिक रूढ़ियो से हैं। सामाजिक निषेध और वर्जनाएँ उनके व्यक्तित्व के विकास में बाधक है न कि उनकी आर्थिक स्थिति। फिर 'निराला' का दृष्टिकोण यथार्थवादी है, प्रेमचद की भाँति आदर्शोन्मुख नही। उनके पात्रो मे हमे एक अद्‌भुत व्यक्तित्व मिलता है, किन्तु उन्हें हम आदर्शवादी की सज्ञा नही दे सकते। उनके चरित्रो मे वही स्वस्थता है, जो एक प्रबुद्ध मानव मे होनी चाहिए।

'निराला' के कथा साहित्य की सबसे बड़ी देन है उनके स्वच्छंद पात्रों की सृष्टि। प्रेमचंद के पात्र सामाजिक रूढ़ियों से मुक्त होने का प्रयास

अवश्य करते हैं, तथापि उनमें सामाजिकता के संस्कार अवशिष्ट हैं। किन्तु 'निराला' के पात्रों में सामाजिकता का वह अवशिष्ट अवगुण भी नहीं है। 'प्रसाद' के 'कंकाल' का विजय अवश्य नितान्त व्यक्तिवादी पात्र है जिसकी समस्त धारणाएँ विशिष्ट दृष्टिकोण की परिचायक है। किन्तु 'प्रसाद' का यह पात्र विशिष्ट शिक्षित और उच्च वर्ग का है, जिसमें ऐसी मान्यताओं की स्थापना कोई नई बात नही है। 'निराला' के शिक्षित पात्रों की तो स्वच्छंद प्रकृति है ही, उनके अशिक्षित एवं अर्द्ध-शिक्षित चरित्रों में भी हमें विशिष्ट व्यक्तित्व मिलता है। कुल्ली, बिल्लेसुर, चतुरी, पगली ('देवी'), ज्योतिर्मयी इसके विशेष उदाहरण है। नारी के प्रति भी 'निराला' का अन्य लेखकों से भिन्न दृष्टिकोण रहा, जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है।

'निराला' का कृतित्व उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा का परिचायक है। विविध भाषीय साहित्य और दर्शन का 'निराला' ने गहन-अध्ययन, मनन किया था, इसके चिन्ह हमें उनकी रचनाओ मे मिलते है। फिर 'निराला' की साहित्य-कला मे इतना वैविध्य है जो एक उच्च-कोटि के कलाकार मे ही संभव हो सकता है। और 'निराला' की इससे भी बड़ी विशेषता यह है कि उनका एक साहित्यिक रूप दूसरे साहित्यिक रूप से घुल मिल नही पाया है। 'प्रसाद' कवि, नाटककार, उपन्यासकार और कहानीकार चारों थे। 'निराला' भी कवि, उपन्यासकार और कहानीकार थे। किन्तु 'प्रसाद' के चारों रूप एकाकार हो गये है। उनके नाटक, उपन्यास और कहानी में उनका कवि रूप स्पष्टतः मुखर हो आया है। पाठक उनके चित्रण और भाषा शैली को देखकर निश्चित रूप से अनुमान लगा लेता है कि ये पंक्तियाँ किसी कवि द्वारा लिखित है। किन्तु 'निराला' के विषय में हम ऐसा अनुमान नही लगा सकते। उनके उपन्यास और कहानियों को पढ़ कर तो कोई आभास भी नही पा सकता कि यह लेखक अपने युग का सर्व-श्रेष्ठ कवि भी है। कथा-साहित्य में उनके रूप-वर्णन और प्रकृति चित्रण को पढ़ ऐसा अवश्य प्रतिभासित होता है कि वह यह लेखक सौदर्य-प्रेमी है। किन्तु प्रत्येक सौदर्यप्रेमी मात्र कवि नही होता। 'कुल्लीभाट', 'बिल्लेसुर बकरिहा' में तो 'निराला' निरे यथार्थवादी गद्य-लेखक लगते है।

'निराला' का कृतित्व हमें नूतन दिशा दर्शन कराता है। 'निराला' ने मुक्त मनुष्य की सराहना की है। मुक्त छंदों के प्रसंग में वे कहते है: "जिस तरह मुक्त मनुष्य कभी किसी भी तरह भी दूसरे के प्रतिकूल आचरण नही करता, उसके तमाम कार्य औरो को प्रसन्न करने के लिए होते है —फिर भी कवि स्वतंत्र, इसी तरह कविता का भी हाल है।" इसी संदर्भ में 'निराला' ने बताया है कि प्रारभिक मानव स्वच्छंद था—"वैदिक साहित्य-काव्य में इस प्रकार की स्वच्छंद सृष्टि को देखकर हम तत्कालीन मनुष्य स्वभाव की मुक्ति का अन्दाज़ा लगा लेते है। परवर्ती काल में ज्यो-ज्यों चित्र-प्रियता बढ़तो गई, साहित्य में स्वच्छंदता की जगह नियन्त्रण तथा अनुशासन प्रबल होता गया है, यह जाति त्यो-त्यों कमज़ोर होती गई है— .....साहित्य के साथ साथ राज्य, समाज, धर्म, व्यवसाय सभी कुछ पराधीन हो गए हैं।[1]" 'निराला' ने व्यक्ति-स्वतत्रता का सदेश दिया। स्वतंत्र होकर ही व्यक्ति और समाज का पूर्ण विकास संभव है। अत: 'निराला' व्यक्ति-स्वातंत्र्य के अग्रदूत बनकर आये। स्वच्छंदता को प्राप्त करने की क्षमता उनके पात्रों में है। 'निराला' संघर्ष के मूर्तिमान रूप थे। और उनका साहित्य उसका प्रतिरूप। इसीलिए वे निराशावादी कभी नहीं हुए। उनके विद्रोह और संघर्ष में अमित आशा और विश्वास निहित है। उनके साहित्य में हताश मानव को प्रेरणा और उत्साह देने की शक्ति है।

'निराला' ने अपने व्यंग्य वाणों से बेध कर व्यक्ति और समाज को चेताया है। उनका व्यंग्य निरर्थक नहीं है और न ही वह उनकी संकुचित मनोवृत्ति का परिचायक है। वस्तुत: 'निराला' के व्यंग्य की सब से बडी विशेषता यह है कि वह व्यक्ति या वस्तु विशेष पर न हो कर उसकी बुराई, क्षुद्रता और विषमता पर है। इसीलिए 'निराला' के व्यंग्य में लोगों को तिलमिला देने की अद्‌भुत शक्ति है। उनकी स्पष्टवादिता ने उनके व्यंग्य

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला': 'परिमल' (भूमिका), पृष्ठ १२, १४–१५, सं० २०१३ वि०, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ।

को और भी अधिक मर्म प्रहारक बना दिया है। स्वयं अपने और अपने पुत्र तक पर वे व्यंग्य करने से नहीं हिचकिचाये। 'देवी' में उन्होंने स्वयं पर ही व्यंग्य किया है।[1] 'चतुरी चमार' में वे अपने सुपुत्र के ब्राह्मण संस्कारों पर प्रहार करते हैं। "यद्यपि अर्जुन उम्र में उससे (चिरंजीव श्री राम-कृष्ण त्रिपाठी) पौने-दो-पट था, फिर भी पद और पढ़ाई में मेरे चिरंजीव बड़े थे, फिर यह ब्राह्मण के लडके भी थे। अर्जुन को नई और इतनी बड़ी उम्र में उतने छोटे से काका को श्रद्धा देते हुए प्रकृति के विरुद्ध दबना पड़ता था। इसका असर अर्जुन के स्वास्थ्य पर तीन ही चार दिन मे प्रत्यक्ष हो चला। तब मुझे कुछ मालूम न था, अर्जुन शिकायत करता न था। मै देखता, जब मैं डाकखाना या बाहर गाँव से लौटता हूँ मेरे चिरंजीव अर्जुन के यहाँ होते है, या घर ही पर उसे घेर कर पढ़ते रहते है। चमारों के टोले में गोस्वामी जी के इस कथन को —'मनहु मत्त गजगन निरखि सिंह किसोरहिं चोप'—वह कई बार सार्थक करते देख पड़े। मैं ब्राह्मण संस्कारो की सब बातो को समझ गया। पर उसे उपदेश क्या देता ? चमार दबेंगे, ब्राह्मण दबाएँगे। दवा है, दोनों की जड़ें मार दी जायं, पर यह सहज साध्य नही। सोचकर चुप हो गया।"[2]

संस्कारों की जड़े बड़ी मज़बूत होती हैं, यह 'निराला' जानते थे। किन्तु उनका कथन था कि हमें अपने पुराने संस्कारों को छोड़ना ही होगा, भले ही धीरे-धीरे ही यह संभव हो। और फिर नवीन जीवन-मूल्यों की स्थापना करनी होगी। 'निराला' नवीन जीवन-मूल्यों के संस्थापक थे। उनका जीवन-दर्शन बड़ा स्वस्थ है। 'अलक।' में पं० स्नेहशंकर के माध्यम से उन्होने अपने जीवन दर्शन की व्याख्या की है। साधना और कष्ट का महत्व वे बहुत ऊँचा मानते थे। उनका कथन था : "शक्ति के संयम में जितना दुःख, जितनी साधना है, उतना दुःख, उतनी साधना बेमेल शक्तियों

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला : 'देवी,' (चतुरी चमार), पृष्ठ ४१, किताब महल, इलाहाबाद।

२. वही पृष्ठ १०–११.

की प्रतिक्रिया में नही[1]।" 'निराला' का जीवन दर्शन उनके जीवन में पूरा-पूरा उतरा था।

'निराला' का विश्वास था कि जब तक लेखक संस्कार मुक्त नहीं होंगे, तब तक उच्च-कोटि का साहित्य निर्मित नहीं हो सकता। "हिन्दी-भाषियों का मस्तिष्क दुर्बल है, रूढ़िग्रस्त होने के कारण वहाँ नवीन विचारधारा जल्द नही प्रवेश पाती, यद्यपि भारतीय संस्कृत साहित्य का इतिहास समस्त प्रकार की मौलिकता लिये हुए है। हिन्दी का समाज-संस्कार अनुरूप न होने के कारण उच्चतम तक नही पहुँच रहे—बहुत जगह भविष्य समाज की कल्पना कर लिखा जाता है। काव्य, कहानी, प्रबध, नाटक इन सब का लेखक जो मनुष्य है, वह अनेक रूपों में विकसित नही हुआ। बड़ी कमज़ोरियाँ है। फलतः साहित्य अभी साहित्य नही हो सका[2]।"

---

१. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'अलका', पृष्ठ ४८–४९, १९६१, गंगा पुस्तक माला, लखनऊ।

२. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' : 'कला की रूप-रेखा' ('सुकुल की बीबी'), पृष्ठ ६३, सं० २०१२ वि०, भारती भंडार, इलाहाबाद।